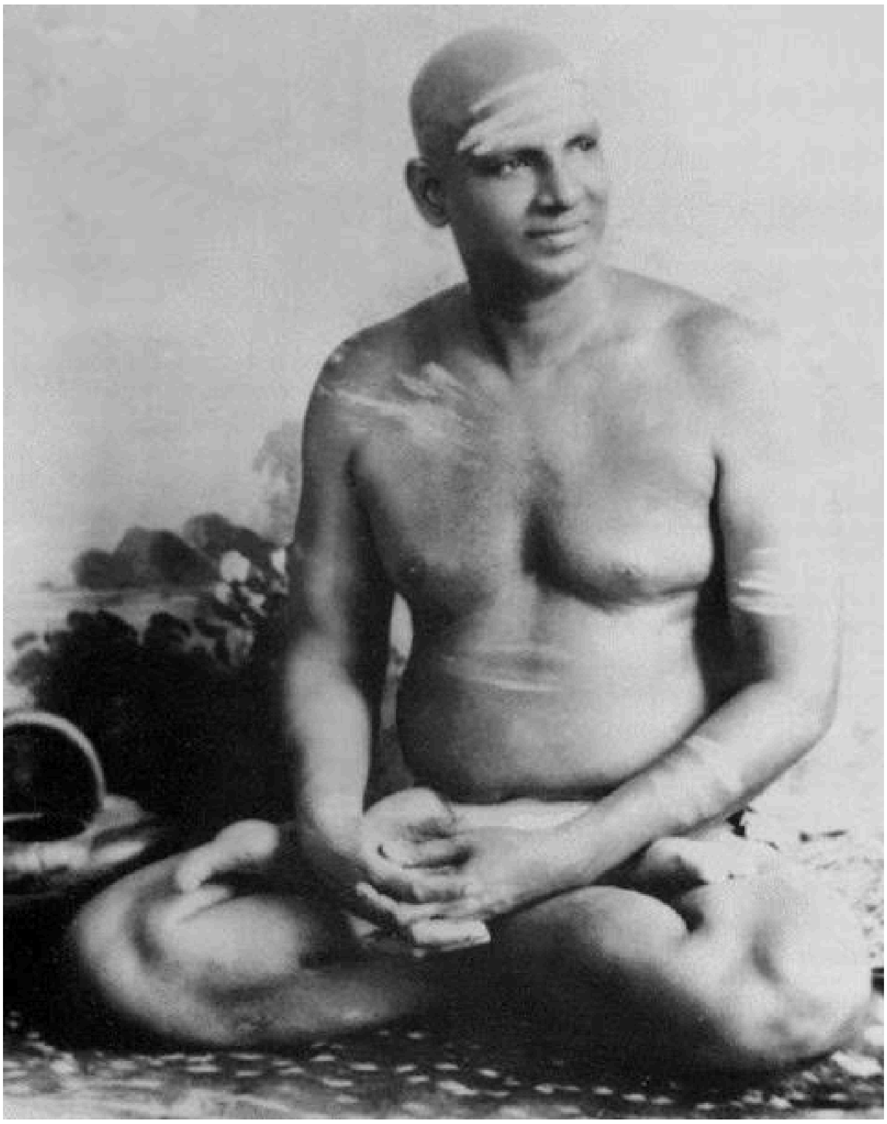
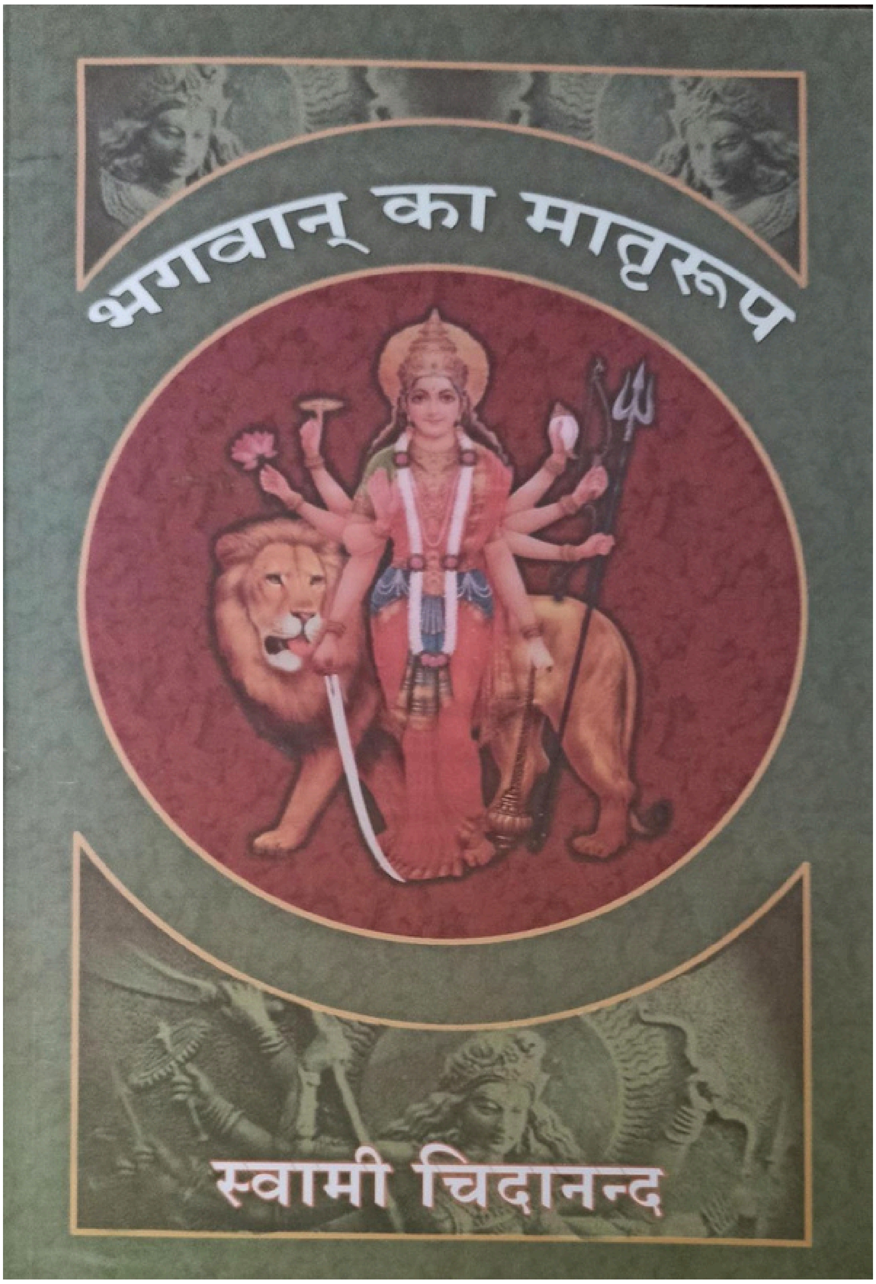



भगवान् का मातृरूप
स्वामी चिदानन्द

GOD AS MOTHER

भगवान् का मातृरुप

का हिन्दी अनुवाद

लेखक

श्री स्वामी हिदानन्द सरस्वती

अनुवादक

श्री हिवगोहवन्द गुप्त, एम. ए., साहित्यरत्न

प्रकािक

द डिवाइन लाइफ सोसायटी

पत्रालय : हिवानन्दनगर-२४९१९२

हिला: ििहरी गढ़वाल, उत्तराखण्ड (हिमालय), भारत

www.sivanandaonline.org, www.dlshq.org

प्रथम हिन्दी संस्करण : १९७६

हितीय हिन्दी संस्करण १९९१

तृतीय हिन्दी संस्करण २००९

तुिथ हिन्दी संस्करण : २०१४

(५०० प्रहतयाँ)

HC3

PRICE:70/-

'द हिवाइन लाइफ सोसायिी, हिवानन्दनगर' के हलए स्वामी पद्मनाभानन्द िारा
प्रकाहित तथा उन्हीं के िारा 'योग-वेदान्त फारेस्ट एकािेमी प्रेस,
पो. हिवानन्दनगर-२४९१९२, हिला हिहरी गढ़वाल, उत्तराखण्ड' में मुहित ।
For online orders and Catalogue visit dlsbooks.org

अथ सप्तश्लोकी दुगाथ

डिव उवाच-

देडव त्वं भक्तसुलभे सववकायवडवधाडयनी ।
कलौ डि कायवडसद्ध्यर्वमुपायं बूरूडि यत्नतः ।।

देवुयुवाच -

शृणु देव प्रवक्ष्याडम कलौ सवेष्टसाधनम्।
मया तवैव से्निनाप्यम्बासुतुडतः प्रकाश्यते ।।

ॐ अस्य श्रीदुगाथसप्तश्लोकीस्तोत्रमन्त्रस्य नारायण ऋह , ि अनुषुप् छन्दिः, श्रीमिाकालीमिालक्ष्मीमिासरस्वत्यो देविताः, श्रीदुगाथप्रीत्यथं सप्तश्लोकीदुगाथपाठे हवहनयोगिः ।

ॐ ज्ञाडननामडप चेतांडस देवी भगवती डि सा।
बलादाकृष्य मिोय मिामाया प्रयच्छडत ॥१॥

दुगे सृमृता िरडस भीडतमिेषजन्ोः
स्वसरै्ः सृमृता मडतमतीव िुभां ददाडस ।
दाररद्र्यदुःखभयिाररडण का त्वदन्या
सवोपकारकरणाय सदार्द्रडचत्ता ॥२॥

सववमंगलमांगल्ेये डिवे सवावर्वसाडधके ।
रिण्ये त्र्यम्बके गौरर नारायडण नमोऽसुतु ते ॥ ३ ॥

रिणागतदीनातवपररत्राणपरायणे ।
सववस्याडतविरे देडव नारायडण नमोऽसुतु ते ॥४॥

सववस्वरूपे सविे सवविक्तक्तसमक्तिते।
भयेभ्यस्त्राडि नो देडव दुगे देडव नमोऽसुतु ते ॥५॥

रोगानिेषानपिंडस तुष्टा
रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान् ।
त्वामाडितानां न डवपन्नराणां
त्वामाडिता ह्यिायतां प्रयाक्तन् ॥६॥

सवावबाधाप्रिमनं त्ैरैलोक्यस्याक्तखलेश्वरर ।
एवमेव त्वया कायवमस्मद्ै्वैररडवनािनम् ॥७ ॥

इडत िीसप्तश्लोकी दुगाव समूपूणाव ॥

हनवेदन

करुणामयी माँ के ि रण कमलों ं में कोहि-कोहि प्रणाम! ि गज्जननी माँ की ि य ो ! पावथती, लक्ष्मी तथा सरस्वती-रूपा माँ के श्रीरणों ंमें िमारा श्रद्धा एवं भक्तिपूणथ प्रणाम! वि आद्यिक्ति, परािक्ति तथा सक्तिदानन्दमयी ि ै। परब्रह्मस्वरूहपणी माँ काली की िय ो! िक्ति, सौन्दयथ तथा सौभाग्य-रूप में तुम स्वरूपतिः परब्रह्म का िी प्रकाि ो। ि े माँ! सब पर तुम्हारा आिीवाथद ो!

'भगवान् का मातृरूप' माँ के िरणों ंमें हनवेदन करते हुए मैं स्वयं को कृताथथ अनुभव करता हाँ। यि तो माँ की िी वसुतु ि ै। कारण, माँ की दया और करुणा के हबना हकसी भी मानव की बुक्तद्ध में प्रकाि आना सम्भव नीं ं ी। यहद इस पुस्तक में अन्तहनथहित तत्त्व तथा उिभाव िमारे मन को उत्साहित करें, तो यि पूिा और भी सुन्दर ी सकती ि ै।

श्री भगवती माँ समूपूणथ सृहि में अन्तहनथहित प्राणिक्ति ि ैं। वि सब िीवों ंकी अन्तरात्मा ि ैं। अतिः माँ की श्रेष्ठ पूिा ि ै सभी मानवों ंकी श्रद्धाक्तित सेवा, िीवों ंके प्रहत श्रद्धा, सभी प्राहणयों ंके प्रहत करुणा और दया। हनस्सन्देि, माँ की प्रहतमा अथवा पि पर पूिा की भी आवश्यकता ि ै, तथाहप माँ की पूिा का यि भी एक अंग ि ै, और अत्यावश्यक अंग ि ै। तभी पूणथ भाव से और श्री माँ के मन की भावनाओं ंके अनुसार पूिा िोगी। सभी प्राहणयों ं

में माँ की उपक्तथथहत अनुभव तथा उपलब्ध करनी िोगी और हिस भाव से माँ की सेवा करते िैं, उसी भाव से सभी प्राहणयों ंकी सेवा करनी िोगी।

श्री श्री माँ की पूिा का प्रधान अंग िै सब िीवों ंके प्रहत श्रद्धा, सम्मान तथा प्रीहत-प्रदिथन। माँ िमारे भक्ति के अर्घ्य को तभी स्वीकार करेंगी, िब िम उनकी समस्त सन्तानों ंके प्रहत समदृहि रखेंगे और करुणापूणथ व्यविार करेंगे। उनकी सन्तान को कि या दुिःख दे कर िम कभी भी माँ को सनुुति निीं ंकर सकते। समस्त मानव उनकी िी सन्तान िै। समग्र सृहि, यिाँ तक हक पिु-पक्षी भी उनकी िी सन्तान िैं। कोई भी उनकी गोद से बािर निीं ंिै। कोई उनसे हवलग निीं ंिै। अतिः सबके कल्याणकारी बनो। सबका आहलंगन करो। सबमें माँ का दिथन करो। उनकी सन्तान की सेवा करके माँ की सेवा करो। सामान्य तृण, पुष्प या हततली को भी आघात न पहुँिाओ। करुणिील बनो। िीव मात्र के प्रहत करुणापूणथ व्यविार करो। कभी हकसी को आित न करो। पीहड़तों ंकी सेवा करो। दररिों ंकी सेवा करो। आतो की सेवा करो। िोक-ग्रस्तों ंको सान्त्वना प्रदान करो। दुिःक्तखयों ंको िाक्तन्त दो। असिायों ंको सिाहय प्रदान करो। आश्रयिीनों ंको आश्रय दो। दुबथलों ंको सािस दो। सिायिीनों ंसे आश्वासनप्रद वाताथ करो। यिी महिमामयी माँ की श्रेष्ठ पूिा िै।

सदा स्मरण रखो हक मानव भगवान् का िल-मक्तन्दर िै। इसका अनुभव करना िी िीवन्त तथा वास्तहवक पूिा िै। माँ सवथत्र हवद्यमान िै। अतिः माँ की सवथत्र, सभी िीवों ंमें पूिा करो। यिी माँ की सिी पूिा िै।

देवीसूि का पाठ करने से यि रिस्य सिि िी समझ में आ िायेगा हक वि िी अन्दर, बािर सभी वसुतुओं ंमें तथा सभी वसुतु-रूप में हवरािती िै।

यिाँ अहत-संक्षेप में माँ की कृपा से उस करुणामयी माँ के हवश्वव्यापी रूप तथा उनकी पूिा के तत्त्व को हकंहित् हवस्तार से प्रकाि में लाने की िेिा की गयी िै। यिाँ साधक के वैयक्तिक िीवन में मातृ–िक्ति के उद्दीपन में अन्तहनथहित नैहतक तथा आध्याक्तत्मक भाव पर प्रकाि डालने की िेिा की गयी िै। आिा िै हक अपने आध्याक्तत्मक पथ पर अग्रसर िोने में साधक को यि ग्रन्थ उसके िीवन में सिायक िोगा।

यि कोई तन्त्रिास्त्र का ग्रन्थ निीं ंिै और न िी िा मत की व्याख्या िी िै। यि तो मातृ-पूिा तथा माँ की भक्ति की यौहगक व्याख्या किी िा सकती िै। प्रेम-दृहि से, योग-दृहि से माँ के प्रहत सभक्ति दृहिपात िै। िमारे धाहमथक तथा िारीररक िीवन की िागृहत में सिाय्य िोने के हलए श्री माँ का भक्तिपूणथ आह्वान िै। मैं अहत हवनीत भाव से अनुरोध करता हाँ हक यहद िन-साधारण इस पुस्तक को सभी ग्रन्थालयों,ं पाठिालाओं,ं मिाहवद्यालयों ंतथा सत्संगों ंऔर हिवालयों ंमें थथान दे कर सवथसाधारण के अध्ययनाथथ उपलब्ध करने की व्यवथथा करेंगे, तो सबका हवि उपकार िोगा।

गृि में माता-हपता इस पुस्तक का पाठ करें। पाठ के समय अपनी सन्तान को भी इसका भावाथथ अवगत करा दें, इस प्रकार की आलोिना से वि मांगल्य को प्राप्त करेंगे। दुगाथ-पूिा-काल में इसे पूिा की कमथ-सूिी में थथान दे सकते िैं। वतथमान पत्रों ंमें भी इसका प्रिार तथा प्रसार कर सकते िैं। इसके पुनमुथिण में भी मुझे कोई आपहत्त निीं;ं क्ोंहक इसका रिहयता मैं हाँ, ऐसा मेरे मन में हकंहित् भी भाव निीं ंिै। यि मेरी रिना निीं,ं माँ की रिना िै। माँ इस पुस्तक के माध्यम से अपनी अपार महिमा का अहत अल्पांि िम अहकंिनों ंपर दया करके स्वयं प्रदान कर रिी िैं। यि सब माँ का दान िै, माँ की िी महिमा िै, माँ का िी ऐश्वयथ िै।

हप्रय पाठक! इस पुस्तक में हनहित माँ की करुणामयी कृपा आपके िीवन में हवकहसत िो! आपको हदव्य ज्योहत, िक्ति एवं ज्ञान प्राप्त िो! माँ आपको स्वास्थ्य, दीघथ िीवन, श्री, साफल्य, हवश्वास, भक्ति तथा श्रेष्ठ आध्याक्तत्मक आनन्द प्रदान करें!

आप िाक्तन्त, आनन्द तथा अमृतव प्राप्त करें! िे माँ भगवती! ॐ तत्सत्।

माँ का िरणाहश्रत
स्वामी हिदानन्द

भूहमका

परमात्मा के साथ िीव के गूढ़ सम्बन्ध पर हविार करने से परमेश्वर का मातृ-भाव िमारी हृदय-गुिा में स्वतिः िी सुफुररत िो उठता िै। इस मानव-िरीर के आधार में आध्याक्तत्मकता का सापेहक्षक हवकास हनरन्तर िोता रिता िै। व्यक्ति के अध्यात्म की एक भावधारा में पहुाँिने पर हदव्य िक्ति, माया अथवा अन्य नाम वाली कोई दैवी प्रकृहत उससे उत्तर भावधारा की प्राक्तप्त का माध्यम बनती िै। भगवती माँ की आराधना भगवत्प्राक्तप्त की िििप्रान्य सुगम्भीर अनुभूहत में सिायक िोती िै।

यद्यहप इस देि में मातृभावाहश्रत पूिा-पद्धहत तथा भावधारा युग-युगान्तरों से प्रिहलत िै, तथाहप इस भावधारा का भावबोध िमारे धमथहपपासुओं को अब अगोिर िै। नाना प्रकार के बाह्य अनुष्ठान, वीभत्सता, लम्पिता आहद दूषणों ने िाक्तियों से मातृ-पूिा की पद्धहत को हवकृत कर हदया िै तथा शंगार के आिार-हविार भी व्यहभिार में पयथवहसत िो गये िैं। इसी कारण अब मातृभावापन्न पूिा-पद्धहत को पुनिः प्रहतहष्ठत करने की हनतान्त आवश्यकता िै। इस दृहि से वतथमान समय में 'भगवान् का मातृरूप' पुस्तक का प्रकािन हविेष रूप से समयोपयोगी तथा हिज्ञासुओं के हलए लाभप्रद िोगा।

आिा िै, इस ग्रन्थ से सत्यान्वेषी साधक-समुदाय हविेष उपकृत िोगा।

-द डिवाइन लाइफ सोसायटी

ॐ ह्रीं ंॐ

आत्मापथण

जपो जल्पः डिल्ंपं सकलमडप मुर्द्ाडवरचनं
गडतः प्रादडिण्यक्रमणमिनाद्याहुडतडवडधः ।
प्रणामः संविः सुखमक्तखलमात्मापवणदि
सपयावपयावयस्तव भवतु यन्मे डवलडसतम् ।।

काव्यानुवाद :

ी बोलूूँ सो मन्त्र–ाप ै, ो कुछ करूँ सो सेवा ।
लिना-हफरना तव पररक्रमा, आहुहत खाद्य कलेवा ॥
सो ाना ी हनत्य दण्डवत्, सुख आत्मापथण देवा।
ी ंस्वीकार कमथ सब मेरे, क्रम पूिा सम लेवा ॥

डवषय-सूची

सप्तम राहत्र

अष्िम् राहत्र

नवम् राहत्र

हविय दिमी

पररहिष्ि

प्रर्म राडत्र

ॐनमश्चक्तण्डकायै

परिाक्ति का अलौहकक प्रकिा

या देवी सववभूतेषु डवषुणुमायेडत िक्तिता ।
नमस्तसै्यै नमस्तसै्यै नमस्तसै्यै नमो नमः ।।

(दुगाथसप्तिती : ५-१६)

(हवषुणु की माया किलाती िो व्याप्त सवथभूतों ंमें माँ।
नमस्कार िै, नमस्कार िै, नमस्कार िै, उसे नमिः ।।)

समस्त सृहि की उद्भव, क्तथथहत तथा संिारिकाररणी भगवती परम कल्याणमयी माँ के श्रीरणों ंमें मेरा कोहि-कोहि प्रणाम!

हिन्मयी माँ ब्रह्म की िी अलौहकक अव्यि िक्ति िैं। ब्रह्म असीम, अनन्त और अहनवथिनीय परम िाक्तन्त िैं। वि इक्तिय व मन से अनहधगम्य िै। माँ उसी परब्रह्म का िी गहतिील रूप िैं।

नवरात्र की प्रथम राहत्र से आरम्भ िो कर िो हवियादिमी को समाप्त िोता िै और िो साधारणतिः
ीिदरा तथा दुगाथ-पूिा के नाम से प्रहसद्ध िै, उस वाह थक पहवत्र नवरात्र-पूिा के उपलक्ष्य में आि िम सब यिााँ प्रथम हदवस को एकहत्रत िो कर मााँ की आराधना में हनरत िैं। हनश्चय िी यि भगवती मााँ की कृपा का मिान् संकेत िै। हिनकी कृपा से िागहतक व पारमाहथथक, आध्याक्तत्मक व व्याविाररक सभी िीिीिाओं ंमें सफलता व हसक्तद्ध प्राप्त िीती िै, हिनकी दया से साधक अपनी साध्य वसुतु को उपलब्ध करने में समथथ िोता िै, हिनके अनुग्रि से हिज्ञासु अपनी हिज्ञासा का समाधान पा लेता िै, िीवात्मा पूणथता को प्राप्त कर भूमा का साक्षात्कार कर पाता िै, आि उनके सम्बन्ध में अल् िों ंमें कुछ िािथ करने के हलए, उनका पूिा-पाठ, स्तव-सुतुहत करने के हलए एकहत्रत हुए िैं, यिी परम सौभाग्य िै। मााँ की कृपा के हबना हसक्तद्ध तथा मोक्ष की प्राक्तप्त निीं ंिो सकती। आि के इस पहवत्र क्षण में िम भगवती मााँ के सम्बन्ध में भारतीय हविारधारा तथा इस नवरात्र-पूिा के ममथ व ऐहतह्य िानने की कुछ िीि
करेंगे।
भारतीय हिन्दुओं ंकी उपासना साधारणतया िार बा पााँि हवहभन्न धाराओं ंमें हवभि िै। िो भगवान् की हिव-रूप में उपासना करते िैं, वे 'िैव' कि िाते िैं। उसी भगवान् की िो हवषुणु-रूप में उपासना करते िैं, उन्ें 'वैष्णव' किते िैं। एक तृतीय प्रकार के उपासक िै िो उस एक िी भगवान् की देवी–क्ति के रूप में आराधना करते िैं, वे 'िाि' किलाते िैं। इनकी संख्या अपेक्षाकृत अहधक िै। इनके अहतररि दो कुछ कम प्रहसद्ध हवभाग िैं िो 'गाणपत्य' तथा 'सौयथ' के नाम से प्रहसद्ध िैं। भगवान् की गणपहत-रूप में उपासना करने वालों ंको 'गाणपत्य' किते िैं तथा सूयथ-मण्डल के प्रत्यक्ष तेि-रूप, इस लोक के प्रकाक और िीवन-गहत को धारण करने वाले सूयथ के रूप में भगवान् की उपासना करने वालों ंको 'सौयथ' कि िाता िै।

नवरात्र की देवी-उपासना मुख्यतिः िाि-उपासना िै और इसकी पद्धहत िमें िाि-परम्परा से िी प्राप्त हुई िै। बंगाल तथा असम में बहुत से लोग इसी भावधारा से उपासना करते िैं। 'दुगाथसप्तिती' अथवा 'देवी-मिात्म्य' इनकी प्रधान तन्त्र-पुस्तक िै। इसमें सात सौ श्लोक िैं। इसी कारण इसे 'सप्तिती' किते िैं। बंगाली भा ा में इसका नाम 'िण्डी' िै तथा गढ़वाल में भी देवी-मिात्म्य-पाठ को 'िण्डी-पाठ' कि िाता िै। कारण, मााँ 'िक्तण्डका' नाम से भी प्रहसद्ध िैं।

यि िण्डी-पाठ खूब हनयम व हनष्ठापूवथक हकया िाता िै। िास्त्रों ंमें इसके पाठ का हनयम बहुत िी हवहध-हवधानपूवथक हदया गया िै। प्रथम अंि में, हिसका आि पाठ हकया गया िै, देवी-तत्त्व की हविद आलोिना िै। इसकी यिोना एक कथानक के रूप में िै। एक ब्रह्मज्ञ ऋह ने एक रािा और एक वैश्य को देवी के मिात्म्य की व्याख्या की िै। देवी कौन िैं, उनका स्वभाव क्ा िै, वि स्वरूपतिः क्ा िैं, देवी-सम्बन्धी इन सब गम्भीर दाथहनक तथ्ों ंसे यि पररपूणथ िै। इसमें सुन्दर प्राणस्पिी मिान् स्तव हदये गये िैं, देवी-पूिन की हवहध दी गयी िै। िाि-उपासना-हवहध में िण्डी का आद्योपान्त पाठ िी एक मिान् तथा प्रभाविाली साधना िै। यिााँ मैं इस ग्रन्थ का मूल हव य संक्ेषेप में दे रिा हाँ।

देवी-मिात्म्य का सार

देवी-मिात्म्य इस प्रकार आरम्भ िोता िै। श्री रािमि के सूयथवंि में सुरथ नामक एक रािा हुए। एक बार अपने ितुरुओं ंिारा आक्रान्त व पराहित िोने पर राज्य त्याग कर पलायन करने को वे बाध्य हुए। उन्ोंनें अरण्य का आश्रय हलया। धन व िन सब-कुछ हछन िाने के कारण वे बहुत िी क्ेलेहित व हव ण्ण थे और इस दुदथिाग्रस्त अवथथा में एकाकी हविरण करते हफरते थे। उनके मन में पुनिः पुनिः अपने नि राज्य व ितभाग्य का हविार उठता। अपने राज्य, अपनी सम्पहत्त व अपने मक्तन्त्रयों ंके हव य की हिन्ता उनके मन में उहदत िोने लगी तथा नूतन रािा इस समय कैसे राज्य–ासन करता िोगा, इस हिन्ता में मग्न रिने लगे। िब उनकी यि मनोदिा

थी, उस समय वि मेधा नामक एक ब्रह्मज्ञ ऋह के आश्रम के सहन्नकि पहुाँ। वि इस आश्रम के सौन्दयथ, हिष्य-कुल और इसके गम्भीर, प्रिान्त व पहवत्र परररवे से आकृि ो कर विीं रिने लगे।

इस आश्रम में रिते हुए संयोगवि उनकी समाहध नामक एक वैश्य से भेंि हुई। वि भी उनके समान ी दुदथिाग्रस्त था और दुभाथग्य के कारण घर से भाग हनकला था। उसकी सारी सम्पहत्त उसके सम्बक्तन्धयों, स्नेहियों तथा कुिम्बी िनों ने छीन ली थी और उसे घर से हनष्काह त कर हदया था। वि भी अपने परररिनों से हवताह़िता ो कर इस वन में हविरण करता था और मुहन के िरणों का आश्रय ग्रिण हकये था।

उन दोनों ने देखा हक वे दोनों एक-सी ी हव म क्तथथत में ैं। यद्यहप उनके हनिी आत्मीय िनों ने उनका सवथस्व अपिरण कर उन्ें उनके गृि से हनष्काह त कर हदया ै, उनके परररिन ी उनके ितुरु और हवरोधी बन गये ैं, तथाहप उनका मन उन सब लोगों की हिन्ता में ी मग्न रिता ै। यि उनके हलए अहत आश्चयथ तथा उलझन का हव य ै हक हिन लोगों ने उन्ें हवताह़ित हकया ै, ो उनके समूपूणथ दुिःखों के कारण ैं और हिन वसुतुओं से उनके समूपूणथ किों की उत्पहत्त हुई, हिनसे उन्ें हनरािा और उदासी झेलनी प़िी, उनका मन पुनिः पुनिः उन्ीं लोगों तथा उन्ीं वसुतुओं का हिन्तन करता रिता ै।

वे दोनों परस्पर आलोिना करने लगे हक मन का यि कैसा अद्भुत स्वभाव ै हक ो लोग तथा वसुतुएाँ समूपूणथ दुिःख तथा ोक का कारण ैं, उन्ें िान कर भी वि उन लोगों में आसि रिता ै और उन्ीं वसुतुओं के प्रहत सदा आकृि ोता ै। इस समस्या का कोई समाधान न पा कर वे दोनों इसके समाधान के हलए ऋह मेधा के पास हवनीत भाव से गये। उन्ोंनें ऋह से किा- "े ज्ञानी प्रवर! इस हव य पर आप कुछ प्रकाि डालें। मे यि देख कर ब़िा आश्चयथ ोता ै हक हिन वसुतुओं से में दुिःख तथा ग्लाहन प्राप्त हुई ै और हिन लोगों ने में सब प्रकार का कि हदया ै, यि मन सदा उन्ीं वसुतुओं की ओर आकृि रिता ै और उन्ीं लोगों के प्रहत अत्यन्त आसि रिता ै। मन िानता ै हक इन समूपूणथ वसुतुओं में कोई सुख निीं ै, तथाहप वि इनकी आसक्ति का त्याग निीं कर पाता। मन के इस प्रकार के मोि का कारण क्ा ै, कृपा करके बतलाइए।"

रािा सुरथ और वैश्य समाहध के ये प्रश्न वसुतुतिः सारे िगत् के प्रश्न ैं तथा प्रत्येक हिन्तनिील मानव का मन इन प्रश्नों से उहिलत रिता ै। इस प्रश्न के उत्तर में ऋह मेधा ने देवी-मिात्म्य की एक अपूवथ व्याख्या दी ै। उन्ोंनें किा- "बालको! मानव-मन एक आश्चयथमयी माया के िारा बद्ध ै, हिससे उसकी हवुिद्ध हविारिक्ति तमसावृत ो रिी ै। उससे ी उसका मन पुनिः पुनिः सब प्रकार के दुिःख तथा बन्त्रणा के कारण-रूप समूपूणथ वसुतुओं व व्यक्तियों में आसि ो कर बार-बार उनमें ी हविरण करता ै। यि माया, यि आवरणिक्ति वसुतुतिः मिामाया की ी अलौहकक िक्ति ै। विी यि हवश्वमाया ैं। इस हवश्व-प्रपंि के पृष्ठ दि में विी रिती ै। उनकी िी रिस्यमयी आवरणिक्ति एक को अनेक करके हदखाती ै, अरूप को बहुरूप धारण कराती ै और अव्यि को व्यि करती ै। यि उस ब्रह्म की ी अवणथनीय िक्ति ै। यिी ब्रह्मिक्ति ै। यिी मिामाया भगवान् की हवश्वव्यापी हवमोहिनीिक्ति ै ो स्वयं भगवान् से प्रकि हुई ै। इसी िक्ति के िारा वि अपने िगत्-नािक के नाम-रूपों की सृहि, क्तथथहत व प्रलय कर पुनिः अपने हवुिद्ध परमात्म-स्वरूप में अन्तलाथन कर लेते ैं।"

रािा सुरथ तथा वैश्य समाहध में ऋह िारा वणथन की गयी इस अलौहकक िक्ति के सम्बन्ध में अहधक िानने की हिज्ञासा हुई। हवश्व-प्रपंि के पृष्ठ भाग में क्तथथत ो कर ो उसका संिालन करती ै, उस हवश्वमाया के हव य में उन्ोंनें सहवस्तार िानना िािा। उनके अनुरोध पर मेधा ऋह ने मिामाया के स्वरूप की कथा हवसूतृत रूप से बतलायी। सप्तिती में इसी का वणथन ै। अन्त में मिामाया के देवी-भाव और उनके अलौहकक रिस्य की व्याख्या करके ऋह ने सुरथ और समाहध को योगाभ्यास िारा देवी की पूिा, ध्यान व आराधना करके माँ को तुि करने का परामिथ हदया। इस भाव से आराधना करने पर माँ उनके समुमुख प्रकि हुईं, उन पर अपनी कृपा-वृहि की और उनकी मनोवांछा पूणथ की।

यिी िोों ंके सवथश्रेष्ठ िास्त्र देवी-मिात्म्य ग्रन्थ का सारांि िै।

माया और ब्रह्म एक िी िैं

देवी-तत्त्व की इस व्याख्या से पता िलता िै हक वि परमा िक्ति िी सवेसवाथ िैं। इसमें किा गया िै हक इस पररदृश्यमान् िगत्-प्रपंि में िो कुछ भी दृहिगोिर िो रिा िै, वि सब परब्रह्म की पराक्ति की हक्रया िै। उसे िी आहदक्ति किते िैं। उसे िी पराक्ति किते िैं। उसे िी श्रेष्ठ हवराट् िक्ति और मिािक्ति किते िैं।

उस सवथिक्तिमान् परमात्मा के साथ इस मिािक्ति का क्ा सम्बन्ध िै, यि एक बड़ा िी रोिक प्रश्न िै और यि प्रश्न प्रायिः सभी मिान् हविारकों ंके मन में उठा करता िै। इस सम्बन्ध में अनेकों ंव्याख्याएँ सुनने में आती िैं; हकन्तु तत्त्वज्ञानी ऋहि यों ंने इस गम्भीर गूढ़ तत्त्व के हव य की, भगवान् के इस अलौहकक (परब्रह्म) रूप और उनके मिामाहयक पराक्ति-रूप के पारस्पररक सम्बन्ध के हव य की स्पि रूप से व्याख्या की िै। वे किते िैं हक परब्रह्म और िगत् को आवरण करने वाली अहिन्त्य माया िक्ति या देवी तत्त्वतिः एक िी वस्तु िैं। बाह्यतिः उनमें पाथथक् प्रतीत िोते हुए भी मूलतिः एक िी िैं, कायथतिः पृथक् दृहिगोिर िोते हुए भी आन्तररक रूप से एक िी िैं। यिी अभेद में भेद िै। यिी उनमें सम्बन्ध िै मानो एक िी हसक्के के मुख व पृष्ठ दो रूप िों।ं मिामाया को छोड़ कर परब्रह्म की भावना निीं ंकी िा सकती एवं परब्रह्म की भावना करते िी उनकी िक्ति मिामाया की भावना करनी िोती िै। वे बतलाते िैं हक मिामाया ने िी व्यि और अव्यि को संयोहित कर रखा िै। विी व्यि और अव्यि को िोड़ने वाली शृंखला िै। हिस प्रकार कायथ और उसका एक कारण िोता िै, हकन्तु इनको संयोहित करने वाला सूत्र क्ा िै? इनके मध्य एक रिस्यमय योगसूत्र िै, िो इन्हें परस्पर एकीभूत बनाये रखता िै। यद्यहप देखने में दो लगते िैं, हकन्तु वस्तुतिः वे एक िी धारा के दो छोर िैं। हिस िक्ति के िारा कायथ कारण के रूप में प्रकि िोता िै एवं कारण व कायथ संयुि रिते िैं, विी माया अलीक प्रपंि अथवा देवी िै।

परब्रह्म हनश्चल व हनक्तिय िै; क्ोंहक वि असीम िै, अनन्त िै, अतिः उसमें हकसी गहत या हक्रया का प्रश्न का िी निीं ंउठता। पराक्ति, हिसे िम देवी किते िैं, विी परब्रह्म का सहक्रय भाव िै। हिस प्रकार दुग्ध तथा उसकी िुभ्रता, अहग्न और उसकी दाहिका–िक्ति, सपथ और उसकी हतयथक् गहत परस्पर अहभन्न िैं, उसी प्रकार ब्रह्म और उसकी िक्ति भी अहभन्न िैं। दुग्ध का हविार आते िी उसकी िुभ्रता का भी हविार मन में आता िै, अहग्न का हविार आते िी उसकी दाहिका–िक्ति का हविार भी मन में आता िै। हिस प्रकार अहग्न से उसकी दाहिका-िक्ति हनकाल लेने पर वि अहग्न निीं ंरि िाती, उसी प्रकार परब्रह्म और उसकी िक्ति अहभन्न िैं। यहद ब्रह्म अहग्न िै, तो िक्ति या देवी अहग्न की दाहिका–िक्ति िै।

ब्रह्म तथा माया या प्रकृहत या िक्ति के मध्य के गूढ़ सम्बन्ध को समझाने के हलए एक आधुहनक उदािरण भी हदया िा सकता िै। वि उदािरण िै हवद्युत् उत्पादन करने वाला यन्त्र (बैिरी) तथा उसके मध्य की हवद्युत्-िक्ति। हिस समय वि यन्त्र हक्रयािील निीं ंिोता िै, ऋणथर िोता िै, उस समय इसको इधर-उधर ले िा सकते िैं। उस समय कोई यि निीं ंिान सकता िै हक उसके मध्य में इतनी हवराट् िक्ति गुप्त रूप से भरी पड़ी िै। विाँ िमें ऐसा कोई बाह्य लक्षण भी दृहिगोिर निीं ंिोता हक हिससे यि कल्पना की िा सके हक उसमें इतनी अद्भुत िक्ति समाहित िै। हकन्तु हवद्युत् तन्तु-प्रणाली िारा, पररपथ िारा हिस समय यि हवद्युत्-यन्त्र (बैिरी) अद्भुत रूप से हक्रयािील िो उठता िै, उस समय इसकी हनश्चल िक्ति सिल िो उठती िै। थथाणु भाव के िोते रिने पर हवराट् कमथरत िक्ति की हक्रया प्रकि िो उठती िै। यि हवद्युत् के समान गहतिील िोती िै। स्पिथ करने पर झिका देती िै। ज्योहत हवहकरण कर उद्दीप्त िो उठती िै और आलोक, प्रकाि करती िै। िक्रगहत से पंखे को िलाती िै। कभी यि प्रिण्ड िैत्यधार यन्त्र (रेहफ्रिरेिर) में हिम की सृहि करती िै और अंगीठी (िीिर) के अन्दर प्रिण्ड अहग्न की

सृहि करती ि ै। नादयन्त्र (सायरेन) के मध्य में तुमुल नाद की सृहि करती ि ै। बैरी के बी में ि ो ि क्ति थथाणु भाव से थी, वी ि ब गहतील ि ोती ि ै तो आलोक, गहत, ताप, ि ीत, नाद आहद अनेक प्रकार से ि मारी इक्तियों ं के ग्राह्य भाव से प्रकि ि ोती ि ै। इसी भााँहत उसी परिाक्ति को अव्यि, अहक्रय, थथाणु अवथथा में परब्रह्म अथवा नाम- रूप-गहत–ीन परम अव्यि किते ि ैं और वी ि ब गहतवान् सहक्रय भाव धारण करती ि ै, सृहि कर नाम-रूप धारण करती ि ै, सारे हवश्व-ब्रह्माण्ड में व्याप्त ि ो कर प्रकि ि ोती ि ै, उस समय उसे मिामाया करते ि ैं। दोनों ं एक िी ि ैं।

मिामाया ि ी हवद्युत्–क्ति, सूयथ की आभा, सागर की गम्भीरता, ि ाथ की गहत, कुसुम का सौरभ, ि ि की स्वर लिरी, इस ब्रह्माण्ड के समस्त दृश्य व अदृश्य पदाथथ, समूपूणथ गहतील की गहत तथा सभी प्रकार की िक्ति ि ैं। वी मानव-हित्त में बुक्तद्ध-रूप में, मन-रूप में, वृहत्त-रूप में तथा भाव-रूप में अवक्तथथत ि ैं। ि में ि ो भी प्रत्ेयेक व्यक्ति के अन्तर व बाह्य प्रकृहत में हक्रया–क्ति के रूप में दृहिगोर ि ोता ि ै, वि सब वी ि ैं। वी हवश्व की प्राण ि ैं। वी हवश्व की उत्पहत्त, क्तथथहत व लय की कारण ि ैं। 'सवथ ि क्तिमयं ि गत्।' यिी परम सत्य ि ै। इस हवश्व में थथूलतम से सूक्ष्मतम तक, कुषितुम से ले कर बृित्तम तक ि ो कुछ भी वतथमान ि ै, वि सब ि ी उसी मिामाया का प्रकाि अथवा परब्रह्म की अलौहकक ि क्ति का हवकास ि ै। यि परिाक्ति ि ी सब नाम-रूपों ं में प्रकाहित ि ै, समूपूणथ प्रकािों ं का मूल व व्यि का आहद ि ै। माया के कारण यि व्यि भाव सम्भव ि ो सका ि ै।

इन नौ हदनों ं में ि म इस परिाक्ति की हवहभन्न रूपों ं में पूिा करते ि ैं। इस परिाक्ति के भावुक भि ि न इसे तीन हवेि भावों ं में मिाकाली अथवा दुगाथ, मिालक्ष्मी और मिासरस्वती के रूप में पूिा करते ि ैं। नौ हदनों ं को तीन-तीन हदनों ं में तीन भागों ं में हवभाहित हकया ि ै। प्रथम तीन हदनों ं में देवी की मिाकाली या दुगाथ के रूप में, हितीय तीन हदनों ं में मिालक्ष्मी के रूप में एवं अक्तन्तम तीन हदनों ं में मिासरस्वती के रूप में कल्ना कर पूिा करते ि ैं। इस भाव से पर-अपर तीन रूपों ं में मााँ की कल्ना व पूिा का गम्भीर मित्त्व व हवेि उद्देश्य ि ै। इसके हव य में ि म आगामी हदवसों ं में हविार करेंगे।

डद्वतीयराडत्र

ऐं ंह्रीं ंक्लीं ंिामुण्डायै हविे

अिुभ ि‍क्ति-हवनाहिनी

या देवी सववभूतेषु िक्तक्तरूपेण संक्तसर्ता ।
नमस्तसै्यै नमस्तसै्यै नमस्तसै्यै नमो नमः ।।

(दुगाथसप्तिती ५-३४)

िी देवी िै िक्ति-रूप से व्याप्त सवथभूतों ंमें माँ।
नमस्कार िै, नमस्कार िै, नमस्कार िै उसे नमिः ॥

परब्रह्म की अलौहकक, अहिन्त्य तथा दुबोध िक्ति उस कल्याणमयी परमा माता को बार-बार प्रणाम!
हिससे इन असंख्य ब्रह्माण्डों ंका आहवभाथव िोता िै, िो असंख्य प्रकािों ंका अवथथान िै तथा समूपूणथ नाम व रूप हिसके मध्य में लय िो कर परब्रह्म में हमल िाते िैं, उस हदव्य िक्ति को मैं प्रणाम करता हाँ।

परब्रह्म की मातृ-रूप में भावना करने का कारण सििि िी िाना िा सकता िै। कारण, इस संसार में न्मि ग्रिण करने वाले प्रत्येक प्राणी को प्रथम ज्ञान अपनी माँ का िी िोता िै। िीव को अपने प्रारक्तम्भक िीवन की सवथप्रथम सूमृहत यहद कुछ िो सकती िै, तो वि िै माँ के अंक में ियन करते हुए उसके वात्सल्यपूणथ नेत्रों ंकी ओर एकिक देखते रिने की सूमृहत। सििु के हलए अक्तखल हवश्व की कोमलता, करुणा, पो ण व पालन का हव य अपनी माँ में घनीभूत व केीभूत रिता िै। यिाँ िी उसका आहदथ िगत् िै, ििाँ से वि अपनी िीवनी िक्ति प्राप्त करता िै, सुख के हलए हिधर भागा िाता िै तथा रक्षा और पररपो ण के हलए हिससे हिपिा रिता िै। विीं ं पर वि अपने सुख, हनभथयता, आश्रय की वसुतु को खिो पाता िै। कारण, सहृदयता, यत्न तथा हनभथयता की आहदथ भूहम माँ िै। इसीहलए सृहिकताथ में यि धारणा व आहदथ आरोहपत करने का हविार बहुत िी स्वाभाहवक, युक्ति-युि व सिि बोधगम्य िै। इसी कारण हिन्दू-दिथन में इस महिमाक्तित िगन्माता की भावना का उद्भव हुआ िो हवश्व के समूपूणथ प्राहणयों ंपर से्ने रखती िैं, साँभाल करती िैं तथा पालन व रक्षा करती िैं।

आि िम उसी माता के महिमामय कुछ रूपों ंके सम्बन्ध में कुछ िि कि कर माँ के श्रीरणों ंमें अपनी परम भक्तिपूणथ श्रद्धांहिल अहपथत करेंगे। यिाँ भी िमें यि स्मरण रखना िोगा हक उनकी पूिा करने का, उनकी महिमा का कीतथन करने का तथा उनके मिान् भाव के हव य में आलोिना करने का िो सुयोग िमें प्राप्त हुआ िै, वि भी उनकी दया व कृपा से िी सम्भव हुआ िै। उनकी कृपा के हबना उनके हव य में सोिना, उनका स्मरण करना, उनका िररत्र-गान करना, उनका महिमामय नाम लेना अथवा उन्‍ माँ कि कर पुकारना सम्भव निीं ंिै। माँ परम दयामयी व अपार करुणामयी िैं। वि स्वभाव से िी पे्रममयी िैं और इसी कारण उन्ोंने आि के इस िुभ और पहवत्र हदवस को मन व वाणी िारा उनकी महिमा का कीतथन करने का परम सौभाग्य व आनन्द प्रदान कर िमें कृताथथ हकया िै।

ी-कुछ िै, सब माँ िै। परब्रह्म सत्स्वरूप अक्तस्तव का सार िै और िो-कुछ िम िानते िैं, विी माँ िै। िो ज्ञान के परे िै, विी पुरु अथवा परब्रह्म िै। िो-कुछ िमारे मन व इक्तियों ंिारा अवगत िोता िै, विी माँ का रूप ै। िमारे बुक्तद्धगम्य यि हवश्व मात्र िी माँ का स्वरूप निीं ंिै- यि कुषुि पृथ्वी व असंख्य िि, सूयथ, ग्रि, तारा, भू-मण्डल, आकाि-मण्डल, िि मण्डल व सूयथ-मण्डल हिसे यि हवश्व किते िैं, वे सब माँ के असीम तथा अनन्त हवरािर रूप के अहत कुषुितम अंि मात्र िैं। उनके मध्य इस प्रकार के हकतने िी हवश्व उत्पन्न िोते तथा लय को प्राप्त िोते िैं। माँ सवथिक्तिमयी िैं। इस सृहि के पृष्ठ भाग में विी िैं। विी सब प्रकािों ंका प्रथम व आहद कारण िैं। वि इस सृहि की िी निीं, ं इस सृहि के सिथक, पालक तथा संिारक की भी स्रिा िैं। ब्रह्मा, हवषुणु तथा मिेश्वर भी माँ के मध्य में अवक्तथथत िैं। वे असंख्य ब्रह्माओं, ं असंख्य हवषुणुओं ंतथा असंख्य मिेश्वरों ंकी माँ िैं। वि हिस प्रकार सवथिक्तिमान् िैं, उसी प्रकार समूपूणथ िक्ति उनका खेल िै। इस कारण से हक्रयमाण हत्रमूहतथ ब्रह्मा, हवषुणु और मिेश्वर आहदिक्ति-रूपी उनकी िी मूहतथयाँ िैं। विी सरस्वती मूहतथ से ब्रह्म–िक्ति रूप में, लक्ष्मी-मूहतथ से हवषुणु-िक्ति रूप में और पावथती-मूहतथ से हिव–िक्ति रूप में िमारे समुमुख प्रकि िोती िैं।

माया और मुक्ति

सवथिक्तिरूहपणी माँ के दो रूप िैं। हिन्दू इन दोनों ंभावों ंमें उनकी पूिा करते िैं। ये भाव बड़े िी सुन्दर ैं। इनके अन्दर हकतनी गम्भीर व्ंयंिना हनहित िै। माँ के ये दो रूप िैं-हवश्वमोहिनी आवरणी माया तथा आवरण-उन्मोहिनी मुक्तिदाहयनी मिामाया। वे सबको अपने अलौहकक माहयक िगज्जाल में बद्ध कर उन्ें अपने िसि क्रीड़ा-भाव से िन्म-मृतुयु के प्रवाि में िाल देती िैं। उस समय उनको अहवद्या किते िैं। यि आध्याक्तत्मक ज्ञान के प्रहतकूल िै। विी परम मुक्तिदात्री भी िैं। अपने इस रूप में वि अपने बिों ंको देख कर मुस्कराती िैं और उन्ें अपने अहवद्या-रूप से छुिकारा देती िैं। इस रूप में माँ हवद्या माया किलाती िैं। हिक्तल्यों ंने परम ज्योहतमथयी मूहतथ
के रूप में उनकी कल्ना की िै। उनके एक िाथ में पाि िै हिसके िारा वि बाँधती िैं, दूसरे िाथ में एक तीक्ष्ण कृपाण िै हिसके िारा वि अपने भिों ंके बन्धन को काि कर मुि बना देती िैं। इस भाँहत वि हवद्या माया और अहवद्या माया की अलौहकक युग्म मूहतथ िैं। इसीहलए उन्ें अहनवथिनीया किते िैं।
माता िी इन दोनों ंिी भावों ंमें इस हवश्व-प्रपंि की स्रिा िैं। माँ के भि िन हिन्ोंने उनकी पूिा िारा उनकी कृपा प्राप्त की िै और िो उनके स्वरूप की उपलक्तब्ध करने में सक्षम हुए िैं, उन्ोंने प्ेरेमपूवथक माँ और उनकी लीला का बड़े िी गूढ़ भाव से हित्रण हकया िै। िम सब िानते िैं हक िब कभी बिे एकहत्रत िोते िैं, तभी उनमें खेल की इच्छा िो उठती िै एवं क्ा खेल करें, यि हनश्चय न कर सकने पर बूढ़ी दादी के पास िा कर उनसे हिज्ञासा करते िैं। वि भी आनन्दपूवथक एक खेल बतला देती िैं और इस प्रकार आँख-हमिौनी का खेल आरम्भ िो िाता िै। वि किती िैं-"िाओ बालको, खेल आरम्भ करो।" बिे खेलने लग िाते िैं। वे भागते िैं, एक-दूसरे की धर-पकड़ करते िैं और आँख हमिौनी का खेल िलता रिता िै; हकन्तुु िब कोई बिुा थक िाता िै और खेल निीं ंखेल सकता, उसे अब और धर-पकड़ अच्छी निीं ंलगती, तो उसे बूढ़ी दादी के पास भाग कर उन्ें छू देना िोता ै। िो एक बार बूढ़ी दादी को छू देता िै, उसे और कोई पकड़ निीं ंसकता। खेल में हिस प्रकार वि वृद्धा िी उस खेल को आरम्भ करती िै, खेल की प्रगहत भी देखती िैं और खेलने वाले बिों ंके ऊपर दृहि भी रखती िैं। उनका स्पिथ कर लेने पर खेल समाप्त िो िाता िै और स्पिथ करने वाले को छुट्टी हमल िाती िै। उसी प्रकार यि हवश्व भी माँ मिामाया के हलए बिों ंका खेल िै। िब कोई व्यक्ति इस दृश्य इक्तियग्राह्य भोग–िगत् की दौड़-धूप से क्लान्त िो कर हनवृत िोने की इच्छा करे, तब उसे केवल इतना िी करना िै हक माँ के हनकि भाग कर िाये और उन्ें स्पिथ कर ले। ऐसा करने से िी इस िगत्-क्रीड़ा के बन्धन से उसे सदा के हलए मुक्ति हमल िाती िै। इसी से माँ के भिों ंने इस िगत्-नािक के हव य में बतलाते हुए इस खेल के सम्बन्ध में हकतने मधुर व आन्तररक भाव से बतलाया िै हक इस खेल का आरम्भ माँ िी करती िैं और इसका अन्त भी वे िी करती िैं

रिस्यमयी माँ काली

देवी के हवहभन्न रूपों ंके सम्बन्ध में हविार करते हुए िम एक हव म समस्या में पि़ िाते िैं। देवी-पूिा के प्रथम रिरत्र के रूप के हव य पर हविार करने से सामान्य मानव का मन कुछ उद्घान्त िो िाता िै। िमारे भाव, हविारधारा तथा संसूकृहत से अनहभज्ञ हवदेहियों ंकी बात िाने दें, िमारे भारत के िी अनेक हिहक्षत व बुक्तद्धमान् हिन्दू भी, हिसको अपनी माँ कि कर ध्यान करते िैं, उसी की इस सवथसंिारिकाररणी अतुयुग्र हवकराल मूहतथ की कल्ना का कारण समझने में असमथथ िैं।

बंगाल प्रदेि में समस्त हिदिरा पूिा िी माँ के इस दुगाथ तथा मिाकाली के रूप की पूिा िै। अनेक लोगों ं में काली का नाम मात्र भय उत्पन्न करता िै। हिन्दू भी अपने मन में सोिते िैं हक काली के उपासक तामसी िोते िैं। काली एक भयंकर व भी ण देवी िैं। मैं अपनी हनिी अहभज्ञता के आधार पर कि सकता हाँ हक दहक्षण भारत में हकसी रूहढ़वादी गृिथथ के घर में यहद कृष्णवणाथ, रिवणाथ हवसूतृत लोलहिह्वा, मुण्डमालाहवभूह ता, हछन्निस्तकहिपररधानपररवृता, रुहधरपुलुता ख्ड्गधृतिस्ता काली की मूहतथ रखें, तो घर की क्तस्त्रयाँ उसे तुरन्त िी बािर हनकलवा देंगी। यहद माँ काली के सम्बन्ध में उनकी यि धारणा उहित िै, तो उनकी हकस प्रकार मातृ-रूप में धारणा और पूिा की िाये?

यि भूल स्वाभाहवक िै और इसका संिोधन करना आवश्यक िै। माँ कभी भी भी ण व भयंकर निीं ंिो सकती िैं। वि सदा िी पे्रममयी और दयामयी िैं। िमिाक्ति के अन्य समूपूणथ रूपों ंमें माँ की काली के रूप में उपासना का अहत-सिि कारण िै। यि कोई दुबोध, गूढ़ आध्याक्तत्मक अथवा कोई गम्भीर दािथहनक तत्त्वपूणथ निीं ं िै, यि अत्यन्त सिि व अत्यन्त स्वाभाहवक िै।

मैं एक आधुहनक अद्यतन उदािरण देता हाँ, हिससे यि हव य सिि िी बोधगम्य िो िायेगा। वतथमान काल में पेनहसहलन व हवहभन्न माइहसन िाहत की ऐण्टीबाइहिक्स का प्रिलन िै। नूतन युग ने उसे िीवन रक्षक मिौ हध नाम दे रखा िै और उसके ऊपर लोगों ंकी अगाध श्रद्धा व हवश्वास िै। मैं हदखलाता हाँ हक ये समूपूणथ औ हधयाँ मनुष्य के हलए हितकारी तथा रोगनािक िोते हुए भी भी ण ध्वंसकारी वसुतु भी किी िा सकती िैं। वे तुम्हारे रोग के कीिाणुओं ंकी भी ण ध्वंसकारी िैं और उनको समूल नि करती िैं। तुम रोगाक्रान्त िो, तुम्हारा िरीर रोग के कीिाणुओं ंसे पररपूणथ िै िो तुम्हें रुग्ण हकये हुए िैं। तुम पेनहसहलन लेते िो और यि तुम्हारे रोग के कीिाणुओं ंको ध्वंस कर देता िै। इस भाँहत कीिाणुओं ंके ध्वंस व संिार के िारा तुम्हारा रोग दूर िो िाता िै और तुम स्वथथ िो िाते िो। तब तुम क्ा इस िीवनदायी मिौ हध को ध्वंसकारी किना िािोगे? यहद इन्ें भी ण और ध्वंसकारी किा िा सकता िै, तो माँ काली को भी भी ण और ध्वंसकारी कि सकते िैं, अन्यथा निीं।ं

संरक्षण के हलए िी यि संिार

इस प्रकार माँ रक्षा के हलए िी संिार करती िैं। ज्ञान-दान के हलए वि अज्ञानता व मोि नि करती िैं। मिारा अन्धकार नि करती िैं हिससे हक िम प्रकाि प्राप्त करें। वि समूपूणथ सन्ताप, दुिःख और समूपूणथ भौहतक आहध-व्याहध और उपाहध नि कर िमें आनन्द, सुख व अमृतव प्रदान करती िैं। इस भाँहत वि िो-कुछ भी िीव को इस भयानक संसार में आबद्ध करता िै, उसे नि कर िालती िैं। वि िो कुछ भी भयंकर िै, उसे ध्वंस कर सुख तथा िाक्तन्त लाती िैं। हिस प्रकार इच्छा–क्ति से, िो हक मन का िी एक अंि िै, उसी मन में अवक्तथथत दुबथलता व नीिता को दूर करते िैं, उसी प्रकार माँ हनि संिार–क्ति रूप से अपने िी एक दूसरे अंि का नाि करती िैं। माँ हवद्यामाया रूप में अपने काली रूप िारा अहवद्या नि कर ब्रह्म के साथ योग कराती िैं।

इस भााँहत िम देखते िैं हक महिमामयी मााँ काली मिो से िमारा उद्धार करती िैं। उसके भि िन इसी भाव से मााँ की काली रूप में पूिा करते िैं। वे मााँ से किते िैं-"िे दयामयी मााँ! मैं अहत-प्रबल मन के अधीन िो
लिा हाँ। अिंकार व इक्तियों ंिारा मैं पीह़ित हाँ। हिरपुओं,ं असंख्य वासनाओं,ं प्रवृहत्तयों ंऔर संस्कारों ंका दास बन
गया हाँ। वे सदा मेरे हवरुद्ध युद्धरत िैं। एकमात्र तुम्हीं ंइन प्रबल ितुरुओं ंके िाथ से मेरी रक्षा कर सकती िो।" बि वे स्वयं उनके साथ युद्ध करने व उन्ें पराहित करने में असमथथ िोते िैं, तब वे मााँ के िरणापन्न िोते िैं और मााँ की िक्ति की सियता ििाते िैं। मााँ कृपा करके उन्ें अपनी िक्ति देती िैं और उस समय मााँ इस काली रूप हवकराल मूहतथ में आ कर उन्ें अपनी इक्तियों ंको पराभूत करने तथा मन को स्व-वि में ला कर उस पर हविय प्राप्त करने में उनकी सियता करती िैं।
नवरात्र में हिस दुगाथसप्तिती का पाठ हकया िाता िै, उसका हव य यिी िै। इसमें कुल तेरि अध्याय िैं। हकस रूप से देवी-देवताओं ंके पक्ष में युद्ध में अवतीणथ िो कर िो-कुछ अज्ञानता, पापािार तथा परम सत्य के हवपरीत िै, उसे ध्वंस कर देती िै-यि सब उसमें बतलाया िै। इसमें असत्य के हवहभन्न रूपों ंकी हवहभन्न दैत्यों ंके रूप में कल्ना की गयी िै। अज्ञान के हवहभन्न स्तरों ंको हवहभन्न दैत्य कि कर उनके स्वभावानुसार उन्ें हवहभन्न नाम व रूप हदया गया िै। इन तेरि अध्यायों ंमें मााँ हवहभन्न रूप धारण कर सब प्रकार के दो , अज्ञानता व गिद्व्यापी माया को सवथभावेन ध्वंस कर देती िैं, इस हव य का वणथन हकया गया िै और अन्त में ज्ञान व हवद्या-िक्ति की समूपूणथ भाव से िय और िीव की अज्ञान के िाथों ंमें हिरमुक्ति प्रदहिथत की गयी िै।

इस प्रकार की कल्ना मात्र िमारे दि की देवी-उपासना तथा ििा-सम्प्रदाय में िी आबद्ध निीं ंिै। संसार के सभी धमों में इस प्रकार के रूपक का व्यविार पाया िाता िै। ईसाई धमथग्रन्थ में भगवान् तथा िैतान की कथा िै। िो कुछ भी दैवी िै, आलोकपूणथ िै-उसका हवरोधी िी िैतान िै। पारसी धमथिास्त्र में अरमान तथा अहुरमज़दा िै। अरमान ईसाई धमथ के िैतान का पयाथयवािी िै। बौद्ध ग्रन्थ में मार की कथा िै। उसी प्रकार हिन्दू-िास्त्र में िो कुछ दुि तथा पापपूणथ िै, उसे माया, अज्ञान अथवा आसुरी िक्ति किा गया िै। यि प्रकाि, ज्ञान, प्रज्ञान तथा आत्मा का हवपरीत धमी िै। वेदान्त में उसे आत्मज्ञान िारा हवदूरणीय अनात्मा किते िैं। सप्तिती की यिी मूल हव य-वस्तु िै। इसमें मााँ अपने काली-रूप में अपनी सन्तान की उसके दुगुथणों ंके नाि करने में सियता करती िैं।

दुगे स्मृता िरडस भीडतमिेषजन्ोः
स्वसरैः स्मृता मडतमतीव िुभां ददाडस ।
दाररद्र्यदु:खभयिाररडण का त्वदन्या
सवोपकारकरणाय सदाऽऽर्द्रडचत्ता ।।
(दुगाथसप्तिती : ४-१७)

मााँ दुगे ! स्मरण मात्र से सब िीवों ंका त्रास िरे।
स्वथथ िनों ंिारा हिन्तन से, िुभ सम्महत प्रदान करे ।
दुि:खदररभियिाथ देवी आप हबना को अन्य करे।
पर उपकारीवि दवाई िो सब िीवों ंपर कृपा करे ।।

तृतीय राडत्र

ॐ दुं दुगाथयै नम

ध्वंस िी सृहि का मूल

या देवी सववभूतेषु िद्धारूपेण संक्तसर्ता ।
नमस्तसै्यै नमस्तसै्यै नमस्तसै्यै नमो नमः ।।

(दुगाथसप्तिती : ५-५२)

िि दैवी श्रद्धास्वरूप से व्याप्त सवथभूतों ंमें माँ।
नमस्कार िै नमस्कार िै नमस्कार िै उसे नमिः ।।

सारे साधकों ंकी िरम गहत व लक्ष्य माँ िी िैं। परब्रह्म व परम माँ एक िैं। िो िगत् की सृहि, क्तथथहत व संिरिकाररणी िैं, उनें बार-बार प्रणाम !

कल िमने माँ के दुगाथ व भी ण काली-रूप की ििाथ की थी और यि देखने तथा िानने की ििो की थी हक बिार से कराल-मूहतथ व प्रत्यक्षतिः ध्वंस की लीला के अन्दर माँ वसुतुतिः कैसे कल्याणमयी व दयामयी रूप में रिती िैं। उनका ध्वंस सृहि के हलए िी, उनका िोरण प्रिुर प्रदान के हलए िी िोता िै। वि अन्त में अज्ञान के गिन अन्धकार को ध्वंस करने में िमारी सियता कर अपने को ज्योहतयों ंकी ज्योहत, आत्मा के िाश्वत प्रकाि के रूप में िमारे समक्ष प्रकि करती िैं।

माँ दुगाथ की इस भी ण संिरि-मूहतथ के आहवभाथव की कथा िी वास्तव में िमारे अनुसन्धान का हव य िै। सप्तिती के एक श्लोक में दुगाथ-नाम की व्याख्या में बतलाया िै हक िो समूपूणथ दुगथहत का िरण करती िैं, िो समूपूणथ प्रकार के हवपद् व दुिःख से रक्षा करती िैं, विी दुगाथ िैं। वि अपने भिों ंके समूपूणथ कि, अमंगल व समूपूणथ आहतथ िर लेती िैं। इसीहलए वि दुगाथ देवी के नाम से अहभहित िैं। यि केवल आध्याक्तत्मक व्याख्या की िी वसुतु निीं ं िै, यि व्यापक अनुभव पर आधाररत सत्य िै हक यि सवथसंिररणी िक्ति समूपूणथ अमंगल व समूपूणथ अिुभ को ध्वंस करने में सक्षम िैं।

िीवन के मध्य में िी ध्वंस की क्रीिा रिती िै

मि देखते िैं हक इस िगत् में और मानव–िीवन में ध्वंस-कायथ सदा िी िलता रिता िै। ध्वंस के हबना िीवन की गहत सम्भव निीं ंिै। धारावाहिक सृहि-कायथ में ध्वंस एक अंग िै। मनुष्य के दैनक्तन्दन िीवन की आलोिना करने पर यि सिि िी उपलब्ध िोता िै। 'अन्नगतािः प्राणािः' मनुष्य के थथूल िरीर के सम्बन्ध में किा। गया िै। अन्न 1 बन्द कर देने पर िरीर भी नि िो िाता िै। आइए, अब िम िरीर-पो ण तथा िीवन-रक्षा की प्रहक्रया पर हविार करें। आिार-उत्पादन कायथ िी अनेक प्रकार के ध्वंस-कायों िारा सम्पन्न िोता िै। िस्य के उत्पादन के हलए भूहम के ऊपर से प्रथम झाि़-झंखाि़ और िंगली पौधों ंका ध्वंस करना िोता िै। तत्पश्चात् भूहम का क थण करना िोता िै। हवहवध उपकरणों ंसे भूहम को खोदना िोता िै। इससे धरती िोत िोती िै। तदुपरान्त िी बीि वपन हकया िाता िै। यि बीि िस्य-रूप में अंकुररत िोने के हलए अपना िीवन देता िै। अन्न के उत्पन्न िोने तक हविना की यि प्रहक्रया सतत िालू रिती िै। तत्पश्चात् भूसी हनकालनी िोती िै। तब अन्न प्राप्त िोता िै। हछलके के हविना से िी अन्न उपलब्ध िो पाता िै। इस अन्न का भोिन बनाने के हलए ईंधन की आवश्यकता िोती िै, हिसके हलए कुल्हािी के कू्रर आघात से वृक्षों ंका हविना करना पिता िै। इस काष्ठ को भी अहग्न की ज्वाला में

आत्म-दिा करना प्रिता िै। इस भााँहत अपना हवनिा कर वि ताप देता िै, तब ओार बनता िै। भोिन करने वाले मिे के सामने बैठ कर इस पके हुए भोिन को खा कर नि करते िैं, हिसके पररणाम स्वरूप अन्न का आकार, प्रकार तथा स्वरूप हवनि िोता िै। इस भााँहत अन्न के मनुष्य के िरीर में पहुाँच कर िीवनिक्ति में रूपान्तररत िोने तक हवनिा की प्रहक्रया िलती रिती िै। यि तो केवल एक प्रारूहपक उदािरण िै। इसी भााँहत यहद िम मानव िीवन के हकसी भी भाग को देखें, तो िम पायेंगे हक िगत् में िो कुछ हनमाथण िोता िै, उसका आधार हवनिा-परम्परा िी िोती िै। अन्त में इन सबका पररणाम आकांहक्षत नव-रिना के रूप में िी हमलता िै।

बृित्तर रूप में भी िम देखते िैं हक िगत् में िीव-सृहि के हनवाथि के हलए यि प्रहक्रया अहनवायथ िै। यहद मृत्यु िारा मानव िरीर का हवनिा न िोता रिता, तो अथथिास्त्री माल्थस के हसद्धान्त के अनुसार इस अहधक निसंख्या-आकीणथ पृथ्वी पर लोगों को खाने के हलए अन्न तथा रिने के हलए थथान उपलब्ध न िो पाता। अहधक निसंख्या सामान्य मनुष्य को दृहिगोिर न िोने के कारण उनके हलए भयावि हििपि निीं िै, हकन्तु व्यापक दृहिकोण रखने वाले अथथिाक्तस्त्रयों तथा रािनीहतज्ञों को अहधक िनसंख्या मानविाहत के हलए एक िाश्वत अहभिाप िै। माता का यि हवनािकारी रूप इस प्रकार मानविरीर की मृत्यु तथा हवलय की गहत िारा अहधक निसंख्या के भूत को दूर रखता िै और मानव िाहत की रक्षा करता िै। ऐसा िोते हुए भी, िनसंख्या बढ़ती िी िाती िै और िब वि िीवन की आवश्यकताओं के उत्पादन की क्षमता से भी कीं अहधक िो िाती िै और िब मनुष्य के सम्मुख ऐसी क्तथथहत आ उपक्तथथत िोती िै, तो वि कााँप उठता िै और िब ऐसी पररक्तथथहत उत्पन्न िोती िै हक अथथिास्त्री और रािनैहतक पुरुष भी आकुल िो उठते िैं, तब िी करुणामयी व स्नेिमयी मााँ की संिारक िक्ति सिायताथथ दौड़ कर आ िाती िै। अहधक िनसंख्या के हवकराल राक्षस को हकस प्रकार रोका िाये, यि मनुष्य निीं िान पाता, तब माता िी भूकम्प, युद्ध, दूर-हवसृतृत दुष्काल, िल-बाढ़ तथा मिामारी के रूप में प्रकि िो कर पररक्तथथहत को उग्र रूप धारण करने से रोक देती िैं।

यहद िम मानविीवन की समस्त प्रहक्रयाओं में से प्रत्येक पर पृथक् पृथक् रूप से हविार करें, तो पायेंगे हक अतीव रिनात्मक प्रहक्रया भी आवश्यक तथा अपररिायथ िै और मनुष्य की मानी हुई संिारक प्रहक्रया का पराकाष्ठा रूप िी िै। साधारण मनुष्य के हलए ध्वंस का अथथ िै अक्तस्तत्व का लोप। एक रूप से दूसरे रूप में पररवतथन संिारकाररणी दुगाथ व काली के दािथहनक तत्त्वज्ञान का आधार िै। यि दिथन िै एक ध्वंस ला कर क्रमोन्नयन-हनम्न अवथथा से, थथूल अवथथा से उिि सूक्ष्म अवथथा की ओर गमन। अन्धकार का नाि िी आलोक का धमथ िै। अन्धकार का नाि हुए हबना प्रकाि का आगमन निीं िो सकता िै। अपहवत्रता का अहतक्रमण हकये हबना पहवत्रता निीं आ सकती िै। इसी भााँहत छोिे का ध्वंस िोने पर िी बड़े का आहवभाथव िोता िै।

ध्वंस निीं ऊर्ध्वीकरण

आध्याक्तत्मक क्षेत्र में ध्वंस का अथथ िै उन्नयन, हनम्न अवथथा से उिितर अवथथा की ओर गमन। ििााँ-किीं भी हवकास की हवधान-परम्परा की योिना की गयी िै, विााँ पर प्रत्येक अल्प एवं हनम्न स्वरूप के हवनिा की परम्परा भी संयोहित हुई दीख पड़ती िै। यि अल्प और हनम्न स्वरूप अपने से उिितर स्वरूप को अपना थथान देते और स्वयं हवनिा को प्राप्त िोते िैं। अतः यि ध्वंस िमारे हलए आवश्यक िै। ऊपर की हदिा में िाने के हलए यि प्रयोिनीय िै। इससे भय करके इससे बिने से काम निीं िलेगा। िब तक िम अिुद्ध वसुतुओं से हिपके रिते िैं, िब तक िम अिुक्तद्धयों का त्याग निीं करते, तब तक उन्नहत करना िक् न िोगा। हदव्य िक्ति के िस्तक्षेप िारा हनम्नता के नाि िोने के पश्चात् िी उिता की प्राक्तप्त सम्भव िो पाती िै। योग तथा साधना की हवहि प्रहक्रया में माता िी के दुगाथ अथवा परम कृपालु काली माता का स्वरूप क्या भाग अदा करता िै, इस पर अब िम हविेष रूप से हविार करेंगे। िम यि देखेंगे हक साधक को अपने िीवन में हकस भाव से मााँ की आराधना करनी िोती िै. हकस भाव से अन्तर में मााँ का रूप उद्घाहित िोता िै एवं हकस भाव से वि साधक को उसके योग-साधना के पथ

में सियता व साफल्य प्रदान करती िै। हकनुतु इन सब पर हविार करने से पूवथ योग-साधना की प्रहक्रया के हव य में हविार कर लेना ठीक िोगा।

िैसा हक िम सभी िानते िैं हक योग-साधना एक ऐसी प्रहक्रया िै हिसके िारा मनुष्य अपने स्वभाव की अपूणथताओं, संकीणथताओं, मानवीय दो ों, दुबथलताओं तथा िीनताओं को पार कर अनन्त एवं िाश्वत हदव्य िेतना का अनुभव करने को उन्नत िोता िै। आध्याक्तत्मक िीवन तथा योग-साधना िारा इस कायथ को आरम्भ करने में साधक को एक हवहित्र पररक्तथथहत का, एक समस्या का सामना करना पि़ता िै। एक िग में िी मानव-स्वभाव से दैवी स्वरूप तक पहुँि िायेंगे, इसमें ऐसी बात निीं िै। िब साधक इस कायथ के हलए आगे पग रखना आरम्भ करता िै, तब उसे ज्ञात िोता िै हक मनुष्य-प्रकृहत में मनुष्यि िीवन से निी के अनेक धमथ अन्तहनथहित िैं। हिन्दू-संसृकृहत में इसका वणथन एक हवि ढंग से हकया गया िै िो हक इसकी अपनी हवहिहिता िै। पुनिथन्म के हसद्धान्त में ऐसा बताया गया िै हक मानव-दिे प्राप्त करने तक िीव अहवकहसत खहनि पदाथों, वनस्पहतयों तथा एक को ाणु वाले िीव िैसी हनम्न श्रेणी की असंख्य योहनयों से िो कर गुिरता िै। इन हनम्न कोहि की असंख्य योहनयों से गुिरते समय उसकी िेतना प्रत्येक िन्म के प्रधान गुणों के संस्कार ग्रिण करती िै। इस कारण मनुष्य-दिे लाभ करने पर भी वि मानव िसि बुक्तद्ध, हववेक तथा हविारि क्ति के साथ िी-साथ मानवेतर योहन के अनेक पूवथ-प्राप्त संस्कारों व प्रवृहत्तयों को विन कर लाया िै। इसीहलए अनेक बार हकतने िी मनुष्यों में ऐसे गुण देखने को हमलते िैं िो सामान्य रूप से पिुओं में िी पाये िाते िैं यथा लोमिी की धूतथता, व्याघ्र की निंसता, वृहश्चक की हव िाता, कुषि िीवों की प्रमाद-वृहत्त, िूकर का पिूपन तथा मानवता की श्रेणी में न आने वाले अन्य सभी दुगुथण। पिु-योहन से ऊध्वथ गहत पा लेने पर भी ये संस्कार उसके स्वभाव में वतथमान रिते िैं। अतिः ऐसा कि सकते िैं हक मनुष्य वसुतुतिः पिु िी िै। िाँ, अन्तर केवल इतना िै हक वि हववेक, ज्ञान तथा हविारि क्ति से सम्पन्न िै। इस भाँहत मानव-प्राणी एक हत्रक िै। वि दैवीभावापन्न मनुष्य और पिुभावापन्न मनुष्य के मध्य की अवथथा में रि रिा िै। उसके एक ओर पािहवक स्वभाव िै और दूसरी ओर दैवी स्वभाव िै। इसी से कभी-कभी वि प्रमाद, काम, क्रोध, हिंसा प्रभृहत पािवी वृहत्तयों से निी की ओर क्तखंिता िै, तो कभी-कभी हवरल क्षणों में उतृकि उन्नत अवथथा को प्राप्त कर करुणा, न्याय, सत्यता, पहवत्रता प्रभृहत हदव्य गुणों को प्रकि करता िै। इस भाँहत वि दो भावों से दोलायमान रिता िै।

अपने अन्दर के पिु-भाव की बहल दो

साधक का प्रथम और प्रधान कतथव्य िै अपनी हनम्न प्रकृहत के, आसुरी प्रकृहत के भावों का समूल उत्पािन। इस प्रकार के भावों को पूणथ रूप से सुसंसृकृत करना िोगा और अपने स्वभाव से इनका उनूमूलन करना िोगा। इसके अनन्तर दैवी भाव में उन्नयन का कायथ िाथ में लेना िोगा। मानवी भाव से उत्क थ िारा दैवी भाव में, उच्तर के दैवी भाव में ले िाना िोगा। मनुष्य एक संग्रहथत प्राणी िै। वि हनम्न पािवी तत्त्वों से, सारासार की हविारि क्ति से, उच्तर आदिों की िेतना के इस पाहथथव िगत् में मानव-योहन में िन्म लेने के भव्य हदव्य उद्देश्य की िेतना से तथा हदव्य उच्तर आदिों तक उन्नत िोने की क्षमता के तत्त्वों से समक्तित िै। मनुष्य के अन्दर िो पिुव भाव िै, उन्िें उच् मानवोहित भाव में ले िाने के हव य में हिन्तन करते-करते मनुष्य पिु-बहल अथि नर-बहल के हिन्तन पर िा पहुँिा। माँ के मक्तन्दर में, माँ के पदतल के निी पिु-भाव की बहल से पिु-बहल की प्रथा का प्रिलन हुआ। प्रथम िािाँ मन के पिु-भाव को माँ के श्रीिरणों में हनवेदन कर मन को पहवत्र करने का हविार था, विीं काल-क्रम से पिु-भाव के प्रतीक-रूप वास्तहवक िीहवत पिु को माँ की वेदी के मूल पर बहल हदया िाने लगा। मनुष्य के आध्याक्तत्मक िीवन की आन्तररक प्रहक्रया की एक आदिथ भावना अधोगहत को प्राप्त िो बाह्य प्रथा बन गयी। साधक के साधनाि िीवन की प्रथम अवथथा में उसके िो निी, पिु-भाव िैं, उन्िें माँ दुगाथ

अथवा श्री काली के िरणों ंमें हनवेदन करना तथा उनकी कृपा व िक्ति िारा उसके हिरकालिन्य पिु-भाव को पूणथतया ध्वंस कर साधना-राज्य में अग्रसर िोना िी इस बहल-प्रथा का अन्तहनथहित तत्त्व िै।

इस उद्देश्य के हलए साधक को प्रथम अपने मन का गम्भीर हवश्लेषण करके यि हनश्चय करना िोगा हक कौन-सा पिु-भाव उसके व्यक्तिव में तीव्र रूप से वतथमान िै। कोई व्यक्ति अन्य हवकारों ंकी अपेक्षा क्रोध का, कोई हवषय-वासना का तो कोई हकसी अन्य हवकार का दास िोता िै। हकसी-हकसी को ऐसा भी लगता िै हक हभन्न-हभन्न हवकारों ंतथा वासनाओं ंका उसके व्यक्तिव के ऊपर अहधकार िै और वे उसे दास बनाये हुए िैं। ऐसा भी िोता िै हक कभी एक तो कभी कोई दूसरा हवकार अपना प्रभुव िमाता िै। अतः प्रथम कायथ िै आत्म-हनरीक्षण करना, आत्म-हवश्लेषण करना तथा पता लगाना हक उसके स्वभाव में कौन-सा दुगुथण कायथ कर रिा िै। अतः अपने मन का प्रामाहणक अध्ययन साधक के हलए हनतान्त अपररियथ कतथव्य िै। उसको िब तक यि ज्ञान न िो हक उसके मन के भीतर कौन-सा तत्त्व िै िो योग में सफलता के हलए अवांछनीय िै, ितुरु िै, िो साधना में अवरोध करता िै, तब तक इस आन्तररक तथा दुगथम योग-पथ पर ठीक से अग्रसर िोना सम्भव न िोगा। यि कायथ इसहलए दुस्साध्य िै हक ये सब तमोगुण, मनुष्य स्वभाव के नीि भाव साधारणतः स्पि रूप से बािर कम िी प्रकि िोते िैं।

बािर के ितुरुओं ंका सामना करना सरल िै, क्ोंहक िम उन्ें, उनके स्वभाव तथा सामथ्य को िान सकते िैं और इसहलए उनके समरूप िी उनका सामना कर सकते िैं। काम, क्रोध, ईष्याथ, द्वेष, हिंसा प्रभृहत मनुष्य के अन्दर के ितुरु नाना रूप धारण करते िैं और वे िमारी दृहि से अगोिर िी रिते िैं। वे हवहवध छद्मवेष में हछपे रिते िैं। अतः यहद साधक प्राथथना िारा अन्तयाथमी की, अपने हृदय में अवक्तस्थत परमात्मा की कृपा प्राप्त निीं ंकर लेता तो अपने इस नीि स्वाथथपूणथ, अिंकारपूणथ स्वभाव को नि करने के कायथ में प्रगहत निीं ंकर सकता। हकसी दूसरे व्यक्ति के सम्बन्ध में हविार करना सरल िै; क्ोंहक उसका बाह्यािारण िमारे दृहि-पथ के अन्दर िै, हकन्तु अपने अन्तर का हविार करना अतीव दुरूि कायथ िै। इसका कारण यि िै हक मानव-मन स्वभावतः बहिमुथखी िै। यि बािर के िागहतक पदाथों की ओर सदा भागा हफरता िै। प्रथम उसे अन्तमुथखी करना दुस्साध्य िै। हवपरीत हदिा में ले िाना बहुत िी कहठन िोता िै। हितीयत, मनुष्य का अिंकार अपने दोषों ंको, अपनी तुरुहियों ंको देखने या खोिने निीं ंदेता। हिस वस्तु से अपने अिं को पोषण निीं ंहमलता, उसे देखने तथा िानने को मन तैयार निीं ं िोता। साधारणतया यि देखा गया िै हक िो िमारे अिंकार के हलए सुखप्रद निीं ंिै, वि सदा िी िमारी दृहि से बािर रिता िै।

अपना हवश्लेषण स्वयं करने में अतीव दुरूि िै। इसीहलए पौवाथत्य आध्याक्तत्मक साधना-मागथ में साधक को सद्गुरु की िरण लेने को किा िाता िै। वि सद्गुरु के हनकि िा कर, उनको सम्पूणथ भाव से आत्म-समपथण कर उनके साहन्नध्य में हनवास करता िै। ऐसा िोने पर उसके वे सम्पूणथ दोष हिन्ें वि अपनी दृहि से देख निीं ंसकता अथवा अपने हवश्लेषण से पकड़ निीं ंपाता, गुरु के नेत्रों ंसे सिि िी पकड़ में आ िाते िैं। तब सद्गुरु उसको इस रूप में िलाते िैं हिससे हक वि सिि िी उन सब दोषों ंपर हविय पा लेता िै, हकंवा उसे इस प्रकार का कायथ करने का आदेि देते िैं हिसमें इस प्रकार के दुगुथणों ंका उन्मूलन हनतान्त अपररियथ िो िाता िै। कभी-कभी वे उसे उपदेि देते िैं और आवश्यकता पड़ने पर उसकी भत्सथना भी करते िैं। साधक की दृहि की पकड़ में िो दोष निीं ंआते, वे सद्गुरु की दृहि से अगोिर निीं ंरि सकते। इससे उनको नि करना सरल िो िाता िै। इस भााँहत, गुरु भी एक बड़ी सीमा तक काली माता का भाग अदा करता िै और साधक की दुवृथहत्तयों ंतथा दुगुथणों ंको नि कर अध्यात्म-मागथ में अवरोध करने वाले अन्तरायों ंको ध्वंस कर देता िै।

आध्याक्तत्मक साधना में दुगाथ का प्राकट्य

माँ दुगाथ गुरु की मूहतथ में और गुरु के भीतर अपने को प्रकि करती िैं। हिष्य के मन में ऊध्वथमुखी गहत की तीव्र आकांक्षा के रूप में माँ का िी प्रकिा िै और कठोर आत्म-परीक्षण तथा आत्म-हनरीक्षण के रूप में माँ का िी हवकास िै। िब इस प्रकार के आत्म-हनरीक्षण से साधक के अन्तिःकुिषु के सामने उसके पिु-भाव का हित्र पूणथ हववरण के साथ प्रकि िो, तब माँ की आराधना कर इन सब पिु-भावों ंके ध्वंसाथथ तीव्र व दृढ़ भाव से प्राथथना करनी िोती िै। उस समय, माँ की इस भी ण ध्वंसमयी मूहतथ के ध्यान तथा आराधना की आवश्यकता िोती िै। योग के पथ में प्रथम पग पर िी माँ की इस सवथ-अिुभ-वृहत्त की संिाररणीि–क्ति के हनकि प्राथथना करनी िोती िै, हिससे हक िमारे योग-पथ की सब बाधाएँ दूर िो िायें और िम अग्रसर िो सकें। अपने दो ों ंके हव य की अज्ञानता इस पथ का प्रथम अन्तराय िै। इस अन्तराय को पार कर लेना और अपने दो ों ंको िान लेना मात्र िी मिारे हलए पयाथप्त न िोगा। अपने दो ों ंको िान लेने पर भी यहद िम उन्ें दूर करने के हलए कुछ न करें, तो वे दो हिरकाल तक बने रिेंगे और िम प्रगहत निीं ंकर सकेंगे। उसके पश्चात् का आगामी पग िै और अपने अन्दर की अधोगामी वृहत्तयों ंको समूल नि करने का दृढ़ संकल् व प्रबल इच्छाि–क्ति को िाग्रत करना। िब एक बार इस प्रबल इच्छाि–क्ति की आराधना की िाती िै, तो पिु-भाव को हवहित कर उस पर आहधपत्य प्राप्त करने की प्रबल इच्छाि–क्ति व दृढ़ संकल् के रूप में माँ स्वयं िी साधक के अन्दर प्रकि िोती िैं।

इसके पश्चात् माता िी कमथमयी इच्छाि–क्ति के रूप में प्रकि िोती िैं। इस इच्छाि–क्ति को हक्रयाि–क्ति तथा साधक में साधनाि–क्ति में पररणत करना िोता िै। इस िक्ति के बल से िी साधक अपने दैनक्तन्दन िीवन के सभी क्षणों ंमें, अपने समूपूणथ कायों में, दूसरों ंके साथ व्यविार में, अपने हविार, उद्देश्य तथा भाव में अपनी समूपूणथ दुि वृहत्तयों ंका सामना करना आरम्भ कर देता िै। यि कायथ साधनाि–क्ति-रूपा भगवती माँ के कारण िी िक् िो पाता िै। इस भाव से साधना िालू रिनी िाहिए। इस कायथ को सफलतापूवथक करने के हलए साधनाि–क्ति रूप में हदव्य माता का आहवभाथव करना तथा अपनी समूपूणथ प्रकार की यौहगक हिप्राओं ंको प्रयोग में लाना िोगा। इस समय यहद साधक को हनम्नगामी वासना आकह थत करती िै तो उसे तपश्चयाथ, उन बसुतुओं ंके त्याग, उन वासनाओं ं के हनरोध िैसी साधना-प्रहक्रयाओं ंका आश्रय ले कर उन वासनाओं ंको पूणथतया नि करना िोगा।

ऐसा कि िाता िै हक वासनाओं ंको तिु न करने पर वे व्यक्ति के मन में गुप्त रूप से हनवास करती िैं और उपयिु अवसर आने पर नाना प्रकार के प्रलोभनों ंके रूप में प्रकि िो कर उस पर हविय प्राप्त करती िैं। यिाँ पर िम एक मिान् सत्य प्रसुतुत करते िैं। ऐसा पाया गया िै हक वासनाओं ंकी पूहतथ िारा उन पर हविय प्राप्त करना इस लोक में सवाथहधक दुस्साध्य कायथ िै। वासना प्रज्वहलत अहग्न के समान िै। वासनाओं ंको तिु करने का प्रयास घृणाहुहत िालने का कायथ करता िै। अहग्न में आहुहत िालने से िम वसुतुतिः उसे िलाने को कुछ देते िैं और उसको िलाने से वि और अहधक प्रिण्डता से, और अहधक भी णता से प्रज्वहलत िो उठती िै। इसके हवपरीत, दाह्य वसुतु के अभाव में अहग्न का स्वाभाहवक िी नाि िो िाता िै। इसी प्रकार इक्तिय की पररतृक्तप्त के हव य का अभाव िोने पर इक्तिय की तृष्णा स्वयमेव नि िो िाती िै। इस प्रकार दुगाथ माता तपश्चयाथ के रूप में साधक में व्यि िोती िैं।

तपश्चयाथ का कि सिन करने के हलए हतहतक्षाि–क्ति की वृक्तद्ध करनी िोती िै। मन को अहत-अरुहिकर क्तथथहत को सिन करने की िक्ति को, मानव के हनम्न प्रकृहत के हलए असुखकर तथा अवांछनीय वसुतुओं ंको सिन करने की िक्ति को हतहतक्षा किते िैं। हतहतक्षा के अनेक रूप व हनयम िैं। उपवास, िागरण आहद तथा आत्म-त्याग अथाथत् मन के रुहिकर पदाथों का कुछ काल के हलए त्याग यथा लवणि–ून्य भोिन, िकथरा-रहित िाय, पादुका त्याग प्रभृहत इसी श्ेरेणी में आते िैं।

प्रत्ेयेक साधक को अपनी हिि अधोगामी वृहत्तयों ंकी रोक-थाम करने तथा हव यि–गत् की ओर व्यक्ति को आकह थत करने वाली ऐक्तिक वासनाओं ंपर हनयन्त्रण प्राप्त करने के उपायों ंपर बुक्तद्धपूवथक हविार कर अपनी व्यक्तिगत साधना का समूपूणथ कायथक्रम हनधाथररत करना िाहिए। अपनी इन सब सक्तम्महलत हियाओं ंके रूप में माता

ीं की हभन्न-हभन्न िक्तियों ंके आहवभाथव के पररणाम स्वरूप साधक आध्याक्तत्मक िीवन तथा साधना के प्रथम प्रक्रम का अहतक्रमण कर पिावी वृहत्तयों ंपर पूणथ हविय प्राप्त करने में समथथ िोता िै।

इस भााँहत पिु-बहल का कायथ माँ की पापनाहिनी, तमोिाररणी, अज्ञान- हवनाहिनी दैवी िक्ति की उपासना िारा िी साहधत िो सकता िै। साधक के आध्याक्तत्मक िीवन में माँ काली की पूिा का यिी उद्देश्य व अथथ ि।

साधक के िीवन में माँ दुगाथ की हवहभन्न धाराओं ंके हवकास पर पूणथ रूप से प्रकाि िालना हकसी भी व्यक्ति के हलए असम्भव िी िै। अतः यि स्वाभाहवक िी िै हक इस पर प्रत्येक व्यक्ति स्वयं हविार करे और अपने ध्येय में उसे प्रकि करने िेतु कायथ करे। इस हव य की सामान्य ििाथ करते हुए िम साधारण रूप से इतना िी कि सकते िैं हक कठोर आत्म-हनरीक्षण, दृढ़ हनश्चय तथा इस हनश्चय को साकार रूप देने वाली कमथमयी ििाा तथा तप, सिनिीलता, आत्म-संयम, उपवास प्रभृहत योग-साधना के सिकारी उपाय के रूप में माँ को उनके हवहवध रूपों ं में अपने अन्तर में प्रकि करना िोता िै।

सप्तिती की हिक्षा

यहद िमें उत्तर हदव्य िेतना को प्राप्त करना िै, तो िमें मानव-स्वभाव और तत्सम्बन्धी समूपूणथ प्रकार की भ्रान्त धारणाओं ंसे ऊपर उठना िै। साधक की मानवीय िेतना के ऊपर हविय प्राप्त करने की प्रहक्रया 'नर-बहल' का प्रतीक िै।

सप्तिती तीन हवभागों ंमें हवभि िै। प्रथम हवभाग में मधु-कैिभ का वध, हितीय हवभाग में महि ासुर-मदथन तथा तृतीय हवभाग में अन्य असुरों ंके साथ िुम्भ-हनिुम्भ भ्रातृ-िय के संिार की कथा िै। ये तीनों ंहवभाग साधना की तीन भूहमकाओं ंके प्रतीक िैं। मधु तथा कैिभ मनुष्य की हनम्न प्रकृहत के थथूल रूप के प्रतीक िैं। महि ासुर-मदथन इससे ऊपर की अवथथा अथाथत् रिोगुण के हवनाि का प्रतीक िै। िब िम तृतीय भाग में पहुाँिते ि, तो िम देखते िैं हक यि असुर कुछ उच्च कोहि का िै। वि एक रािा िै, बहुत िी धनवान् िै, खूब हिहक्षत िै; हकन्तु हमथ्या दम्भ-वृहत्त से पररवृत िै। स्वगथलोक पर उसका आहधपत्य िै। भूलोक की समस्त सम्पहत्त का वि स्वामी िै। समूपूणथ ितुदथि भुवनों ंमें िो भी काम्य पदाथथ िैं, सवथश्रेष्ठ पदाथथ िैं, उन पर इन दोनों ंअिेय भ्राताओं ंका अहधकार िै। वे प्रभूत सैन्य के नेता िैं। उनके एक योद्धा का नाम रिबीि िै। वि मनुष्य के अिं-भाव का प्रतीक ि। इस अिं-भाव के ध्वंस िोने पर िी िुम्भ-हनिुम्भ का वध सम्भव िो पाता िै। ये दोनों ंहवक्षेप तथा आवरण-िक्ति के प्रतीक िैं। इनकी मृतुयु से मानव तथा हदव्य िैतन्य के बीि का अक्तन्तम अन्तराय भी िाता रिता िै और माँ की कृपा से आध्याक्तत्मक िीवन की पराकाष्ठा पर पहुाँि कर व्यक्ति परब्रह्म के साथ एकीभूत िो िाता िै।

भवाडन त्वं दासे मडय डवतर दृडष्टं सकरुणा-
डमडत स्तोतुं वांछन् कर्यडत भवाडन त्वडमडत यः ।
तदैव त्वं तस्मै डदिडस डनजसायुज्यपदवीं ं
मुकुन्द ब्रह्मेन्द्रस्फुटमकुटनीराडजतपदाम् ।।'

(सौन्दयथलिरी २२)

देहव! दास तुम्हारा मुझ पर करुण दृहि प्रसार करें।
'मातु भवानी। कि ते िी सुतुहतकताथ पर कृपा करें।।

और उसे देती हनि पदवी ि ो सायुज्यमयी स्यन्दन।
ब्रह्मा हवष्णु इ मुक्तिों ंको झुका करें तव पद बन्दन ।।

चतुर्व राडत्र

ॐ श्रीं ंॐ

लक्ष्मी: परम पालहयत्री

सववमंगलमांगल्ेये डिवे सवावर्वसाडधके।
रिण्ेये त्र्यम्बके देडव नारायडण नमोऽसुतु ते ।।
(दुगाथसप्तिती : ११-१०)

मंगलमयी सब मंगलदाता, सवथ पुरु ाथथ साहधती माँ।
नारायणी गौरी त्र्यम्बके नमस्कार ि ै तुम्हें नमिः ।।

सबकी उत्पहत्त व लक्ष्यरूहपणी तुम्हें नमस्कार ि ै। सवथिक्तिमान् परमात्मा की परिाक्तिरूहपणी माँ सरस्वती तुम्हें नमस्कार! मिालक्ष्मीरूहपणी िक्ति तथा दुगाथरूपा आहद िक्ति तुम्हें नमस्कार !

आि सृहिकाररणी माँ-रूप में भाहवत भगवान् की पूिा का ितुथथ हदवस ि ै। आि िम इस गम्भीर तथा मित्त्वपूणथ पूिा की हितीय भूहमका में प्रवेि करते ि ैं। आि से पराक्ति की उनके एक नवीन रूप में, धारण व पो णकाररणी माँ के रूप में आराधना आरम्भ िोती ि ै। आि से तीन हदन तक सारे भारत में माँ की मिालक्ष्मी के रूप में पूिा की िायेगी। ि ै तीन हदन माँ की मिासरस्वती के रूप में पूिा कर दिम हदन हवियादिमी को इस पूिा की पररसमाक्तप्त िोगी।

सूक्ष्म तथा थथूल में अवतरण

नवरात्र-पूिा की इस हविहि योिना पर हविार करते समय माँ भगवती के हवहवध रूपों ंकी, क्रमिः दुगाथ, लक्ष्मी तथा सरस्वती की पूिा में एक गम्भीर सत्य का हवकास हदखायी पड़ता ि ै। यि स्वयं में एक स्वाभाहवक हनयम का िी प्रकाि ि ै। अदृश्य तथा नाम और रूप से परे की परम िक्ति दृश्यमान् िगत् के रूप में दृहिगोर बनती ि ै तथा नाम और रूप धारण करती ि ै। तब प्रहतगामी प्रहक्रया आरम्भ िोती ि ै, िो हनरपेक्ष ि ै वि सापेक्ष बनता ि ै, िो अनामी ि ै वि नाम धारण करता ि ै, िो अरूप ि ै वि रूपवान् बनता ि ै। इस प्रहक्रया में सवोत्कृि तत्त्व, सूक्ष्म से सूक्ष्मतम तत्त्व, आहद कारण व स्रोत क्रमिः थथूल की ओर अग्रसर िोता हुआ अन्त में ि ि पदाथथ में पररणत िो िाता ि ै। यि प्रहतगामी प्रहक्रया प्रपंि के हवकास का एक क्रम ि ै। यि एक से अनेक बनने का, अव्यि से व्यि बनने का, कारण से हवहवध पररणाम-रूप में प्रकि िोने का क्रम ि ै। इसी भाँहत िब साधक इस थथूलोन्मुखी गहत से अपनी मूल उत्कृि क्तथथहत में पहुँिने का, ऊध्वथगामी िोने का प्रयत्न करता ि ै, भौहतक क्षेत्र से आध्याक्तत्मक क्षेत्र की ओर अग्रसर िोने की िि ा करता ि ै, तो उसे अपने अन्दर की गहत को पूवथ-गहत के हवपरीत

हदिा में िलाना िोता िै। उस समय हदव्य िक्ति ठीक हवपरीत हदिा में कायथ करना आरम्भ कर देती िै और थथूल से सूक्ष्म की ओर अग्रसर िोना आरम्भ िो िाता िै।

बि हवकास-हक्रया आरम्भ िोती िै, तो प्रथम ब्रह्मा की सृिन–क्ति काम करना आरम्भ कर देती िै।
सृिन–क्ति की हक्रया–क्ति के हक्रयािील िोते िी पराप्रकृहत से नामरूपात्मक सृहि की धारा प्रकि िोती िै।
अव्याकृत से ये नाम और रूप माया के राज्य में प्रवेि करते िैं। उस समय ये भूत, वतथमान और भहवष्य नामक
काल के आहधपत्य के नीिे आते िैं। उन्हें अपने नाम और रूप को प्रहतधारण करना और हत्रकाल में अपना
अक्तस्तत्व बनाये रखना िोता िै, इससे पररररक्षण, पालन, पो ण और रक्षण–क्ति का कायथ आरम्भ िो िाता िै।
हवश्व-प्रपंि के संिालक तथा िगत् के पालनकताथ हवष्णु की हक्रया–क्ति के रूप में िीमाक्ति कायथ करती िैं।
विी मिालक्ष्मी िैं। काल-प्रवाि की िपेि में आने से नाम और रूप पररवतथनिील व क्षहयष्णु िैं। अतः उनमें
पररवतथन अहनवायथ िै। नाम तथा रूप का हववतथन तथा नाि की हक्रया हिसका कायथ िै, विी रुद्र िैं। वि लय और
ध्वंस के अधीश्वर िैं। इस प्रकार उत्पहत्त से हवलय तक यि हक्रया िलती रिती िै। यिी थथूल में अवतरण िै।

मनुष्य की ईश्वरव-प्राक्तप्त

गीता में किा िै हक योगी िनों का कायथ साधारण िागहतक लोगों के कायथ से सवथा हवपरीत हुआ करता
िै। सांसाररक मनुष्य का हदवस संयतात्मा के हलए राहत्र िै। सांसाररक मनुष्य हिन बातों में िागृत िै, उन बातों
में योगी सोया रिता िै और उनकी ओर कुछ ध्यान निीं देता। अध्यात्म–गत् में रिने वाली उन्नत भावनाओं में
संसारी िीव सोया-सा रिता िै, िब हक योगी इनमें पूणथ िाग्रत रिता िै। सांसाररक मनुष्य हिसे देखता िै,
उस
ओर से योगी मुख फेर लेता िै और सांसाररक मनुष्य हिस वस्तु को निीं देख पाता, उसे योगी अपने आध्याक्तत्मक
अवबोध की अवथथा में देखता िै। इस हनयम के अनुसार िब यि हदव्य िक्ति अन्तर िेतना के साम्राज्य में
हवकास की ऊध्वथ प्रहक्रया आरम्भ करती िै, तब साधक िक्ति की आराधना उलिी रीहत से करता िै; क्योंहक यि
हवकास की प्रहक्रया अवतरण प्रहक्रया के हवपरीत िोती िै।
सवथप्रथम, साधक माता िी के संिारक रूप की उपासना करता िै, हिससे िीव के ऊपर छायी हुई
भौहतकता का नाि िो। िीवात्मा थथूलता में, भौहतकता में अवतररत िै, वि अज्ञान में हनमग्न िै। अतः िि की
पक्ि से मुक्ति, अज्ञान तथा मोि-पाि का ध्वंस, अिुद्ध मूल तत्त्वों पर हवनय तथा हविुद्ध, सूक्ष्म व आध्याक्तत्मक
राज्य तक ऊध्वथ गहत प्रथम प्रहक्रया िै। प्रथम िीव के थथूल भाव तथा भौहतक िगत् के प्रभाव को नाि करने के
हलए माता िी की िक्ति तथा बल-रूप में प्राथथना की िाती िै। इसके उपरान्त योग के पथ व आध्याक्तत्मक िीवन में
उन्नीत िो कर साधक लक्ष्मी-रूपा माँ की आराधना करता िै हिससे आध्याक्तत्मक िीवन में हिके रिने में िो कुछ
भी आवश्यक िै, वि सब उसे प्रदान करें।

व्याविाररक िगत् में भी योग-क्षेम के विन करने के हलए भी लक्ष्मी माता की आराधना आवश्यक िै। यि
सदा स्मरण रखना िोगा हक भगवान् के मातृत्व की दो प्रकार से कल्पना की गयी िै— हवद्या माया तथा अहवद्या
माया। उसकी इस हवद्या माया के रूप में पूिा की िाती िै। इसी से वि लक्ष्मी-रूप में साधक की रक्षा करती िैं,
पालन करती िैं, उसकी साधना को ऊध्वथगहत देती िैं और उसके योग तथा साधना की रक्षा कर पररपो ण करती
िै।

योग-पथ में और अग्रसर िोने पर माँ की मिासरस्वती के रूप में आराधना करनी िोती िै। परब्रह्म का
प्रथम प्रकाि िब सवथप्रथम अव्यि से व्यि रूप धारण करता िै, उस समय का माँ का यि रूप िै और वि
ब्रह्म के सवाथहधक सहन्नकि िै। इस प्रथम अहभव्यक्ति के रूप में वि ज्ञानदाहयनी िै। वि िीव का परमात्मा अथवा

परब्रह्म से योग कराती ि ं और उसे परा ज्ञान प्रदान करती ि ं। इससे वि उन्नत आत्मि-तन्य अनुभव करता ि ै। साधक उस समय माँ की हवद्या माया के रूप में आराधना करता ि ै हिससे वि हिस पथ से सृहि-राज्य में अवतररत हुआ ि ै, माँ उसको पुनिः ऊर्ध्वाथरोिण करने में थथूल िगत् से मूल अव्यि तत्त्व तक िाने वाले ऊर्ध्वथमुखी पथ पर प्रयाण करने में उसकी सिायक ि ों। ं

अि-ऐश्वयथिाहलनी लक्ष्मी

मिालक्ष्मी के अहवद्या माया-रूपी प्रापंहिक स्वरूप का िम प्रथम हविार करें। यि अहवद्या माया िी परब्रह्म से प्रकि हुई इस सृहि का पररररक्षण करती ि ं। इस पाहथथव

गित् में सफल तथा सौभाग्यिाली िीवन-यापन के हलए िो हवहवध वस्तुएँ आवश्यक ि ं, वे सब अहवद्या माया के िी स्वरूप ि ं। मिालक्ष्मी अि-ऐश्वयथिाहलनी ि ं। हिन्दू-िन उन्िें अिलक्ष्मी नाम से अहभहित करते ि ं। गित् में िीवन धारण करने के हलए सवाथहधक आवश्यक वस्तु ि ै खाद्य। थथूल दिे धारण करने वाले सभी प्राणी खाद्य से िी पो ण प्राप्त कर िीते ि ं। यि खाद्य प्रमुख रूप से कृह िात अन्न ि ै। अन्न को धान्य किते ि ं। इसी से माँ की 'धान्य लक्ष्मी' के रूप में पूिा िोती ि ै।

िम सब देखते ि ं हक कृ क तथा अन्य सभी लोग व थ में िस्य-लवन के हदनों ं में एक हविे तथा हनहश्चत हदवस को नूतन धान के गुच्छे की पूिा करते ि ं। उस हदन आनन्दोत्सव मनाते ि ं। खेत में उगे नूतन िस्य के प्रथम बार किाने के समय उसे लवन कर बिे समारोि तथा गान, वाद्य सहित घर ले िाते ि ं और यथाहवहित भाव से देवोहित पूिा करते ि ं। इस भाँहत माँ िीवन धारण के एक अतीव मित्त्विाली साधन, धान्य के रूप में आराहधत िोती ि ं और अपने इस रूप में वि िमारे इस समूपूणथ मानव-िगत् में प्रकि ि ं।

दूसरे, समाि में िािे वि अन्तदेिीय िो या अन्तराथरीय, मनुष्य के सभी व्यविारों ं के हलए सम्पहत्त अथवा धन की हनतान्त आवश्यकता िोती ि ै। सम्पहत्त के हबना सुख, सौभाग्य तथा सफलता लाभ सम्भव निीं ं ि ै। धन के हबना वि कोई भी कायथ निीं ं कर सकता ि ै। इसीहलए धन को भी लक्ष्मी माता का एक स्वरूप माना िाता ि ै। धन का अथथ हकसी भी प्रकार की सम्पहत्त, मुिा, पण्य वस्तु प्रभृहत समूपूणथ प्रकार की मूल्यवान् वस्तुएँ िी लेना िाहिए। इस भाव से समाि में धन भी सम्माहनत व पूहित ि ै।

भारत में माता िी के हभन्न-हभन्न स्वरूपों ं की हभन्न-हभन्न वगों में पूिा िोती ि ै। हिन्दू-समाि वणाथश्रम की सुन्दर व्यवथथा पर अवक्तथथत ि ै। समाि के कायथ के हलए श्रम-हवभाग कर हदया गया ि ै और राष्ट्र-िीवन के हभन्न-हभन्न अंगों ं की साँभाल हभन्न-हभन्न िाहतयों ं को सौंपी गयी ि ै। माँ की धान्य-लक्ष्मी, धन-लक्ष्मी, हवद्या- लक्ष्मी, धैयथ-लक्ष्मी, िय-लक्ष्मी, वीयथ-लक्ष्मी, राि-लक्ष्मी और सौभाग्य-लक्ष्मी- अि-हवध रूप में पूिा की िाती ि ै।

िीवन-रक्षक अन्न में माता िी की धान्य-लक्ष्मी के रूप में तथा सम्पहत्त में माता िी की धन-लक्ष्मी के रूप में पूिा की िाती ि ै। इस संसार में सुखी तथा सभ्य िीवन-यापन के हलए कला और हवज्ञान बहुत आवश्यक ि ं। इन्िें अपरा हवद्या किा िाता ि ै। इस अपरा हवद्या में माता िी का हवद्या-लक्ष्मी-स्वरूप में पूिन हकया िाता ि ै। सम्पहत्त तथा ज्ञान के सदुपयोग के हलए आवश्यक सािस में माता िी की धैयथ-लक्ष्मी के रूप में और िीवनी िक्ति में माँ की वीयथ-लक्ष्मी के रूप में पूिा की िाती ि ै। राि-सत्ता में राि-लक्ष्मी की भावना कर उनका पूिन हकया िाता ि ै। हवपरीत पररक्तथथहतयों ं तथा सफल, वैभविाली और सुखी िीवन में बाधा िालने वाले अन्तरायों ं पर हविय हदलाने वाली िक्ति में िय-लक्ष्मी के रूप में और सवथ क्षेत्रों ं में. समृक्तद्ध में सौभाग्य-लक्ष्मी के रूप में माँ की पूिा की

िोती िै। पालक व पो क िक्ति-रूपा माँ लक्ष्मी इस मानव-लोक में इन अिहवध रूपों ंमें प्रकाहित िैं। क्षहत्रय युद्ध में हवियदायी अस्त्रों ंके रूप में माँ की पूिा करते िैं। उनके हलए खड्गाहद हवियि–स्त्र मिालक्ष्मी के िी रूप िैं।

समाि की वणथ-व्यवथथा में तृतीय थथान वैश्यों ंका िै। ये लोग वाहणज्य व व्यवसाय करते िैं और मिालक्ष्मी की धन-रूप में पूिा करते िैं। इस संसार में धन िी सवोपरर िक्ति िै। अतः उन्िोंनें माँ की धन-रूप में पूिा करने के हलए एक हविे हदन हनहश्चत कर रखा िै। लक्ष्मी-पूिा और दीपावली के हदनों ंमें, हविे कर बम्बई िैसे वैभविाली नगरों ंमें रुपयों ंका सूतूप बना कर उसकी साक्षात् माँ लक्ष्मी के रूप में वैसे िी पूिा करते िैं िैसे भावुक हिन्दू देव-देहवयों ंकी करते िैं।

समाि की वणथ-व्यवथथा का ितुथथ अंग िूि िैं। वे िस्य उत्पादन करते िैं और िस्य की िी लक्ष्मी-रूप में पूिा करते िैं। ब्राह्मण ज्ञान के िरस्टी (अमानतदार) माने िाते िैं। इनका काम लोगों ंको ज्ञान प्रदान करना िै। ये माँ की हवद्या तथा पुस्तक-रूप में पूिा करते िैं। आयुध-पूिा के हदन सब प्रकार के यन्त्रों ंव प्राण-रक्षक िस्त्रों ंकी भी पूिा का प्रिलन िै। इस भाँहत हिन्दू-समाि में मानव-समाि के रक्षक तथा पालक-रूप में भगवान् के मातृ-स्वरूप का दिथन हवहवध रूपों ंमें िोता िै।

लक्ष्मी के प्रहत साधक का भाव

इस प्रकार एक श्रद्धालु हिन्दू, िो िक्ति इस भौहतक िगत् में सभी प्राहणयों ंका पालन-पो ण करती िै, उस मातृि–क्ति को अपने भौहतक िीवन के हलए देवी का एक मित्त्वपूणथ आहवभाथव मानता िै। यि उसकी बुक्तद्धयुि यथाथथवाहदता का पररिायक िै। इस भूलोक में सुख-सम्पहत्त से समृद्ध िागहतक िीवन के रक्षण तथा पो ण करने में िो–िो तत्त्व सिायक बनते िैं, उन सबको वि इस भौहतक िगत् में हदव्य िक्ति का प्रकि स्वरूप मानता िै और ऐसा िी उनका मूल्यांकन करता िै। इस भाँहत िम इस संसार की समस्त सुन्दर वसुतुओं ंके प्रहत उसके यथाथथवादी भाव को स्वीकार करते िैं। इसके साथ िी ध्यान देने योग्य एक रोिक बात यि िै हक परब्रह्म अथवा िरम सत्ता की िाश्वत खोि भी प्रत्येक हनष्ठावान् हिन्दू की आन्तर िेतना का एक अहवभाज्य अंग िै।

िब हिन्दू िगत् की सम्पहत्त तथा अन्य समस्त सुन्दर वसुतुओं ंको लक्ष्मी के प्रतीक-रूप में श्रद्धापूवथक पूिता िै, वि मन एवं प्राण से यि भी स्वीकार करता िै हक िब भी उसके अन्तर में हदव्यानुभूहत की अभीप्सा उदय िोती िै, तो व्याविाररक िगत् के हलए हनत्यप्रहत अतीव आवश्यक लक्ष्मी के इस रूप की उपासना को दृढ़तापूवथक हतलांिहल दे उससे हवरत िो िाता िै। इस भाँहत वि इस िगत् के भौहतक पदाथों से मुख मोड़ लेता िै और सम्पहत्त का त्याग कर त्याग का पथ अवलम्बन करता िै। वि स्वीकार करता िै हक िब तक व्यक्ति तृष्णा तथा उसकी पूहतथ में रत िै, तब तक िागहतक पदाथों में वतथमान परिाक्ति के स्वरूप को उसे स्वीकार करना िी पड़ेगा; परन्तु हिस क्षण उसकी वासना-पूहतथ की दौड़ समाप्त िो िाती िै, िगत् के पदाथों की हवनश्वरता, क्षहणकता तथा अहनत्यता उसे मालूम िो िाती िै तथा हिस क्षण उसका मन अक्षर वसुतुओं ंमें लगता िै, उस क्षण वि माता के उस लक्ष्मी-स्वरूप को अक्तन्तम हवदायी दे कर उनके अपर स्वरूप अथाथत् हवद्या माया की आराधना आरम्भ कर देता िै। उस समय वि माँ के समीप प्राथथना करता िै-"माँ, मुझे अपने धन, सौभाग्य, पाररवाररक सुख तथा सांसाररक श्रेष्ठ पदाथों की मोिकारी मायाि–क्ति के प्रभाव से मुक्ति दान कर।" इस भाँहत वि अहवद्या माया रूपी लक्ष्मी की पूिा से हविारपूवथक हवलग िो िाता िै। साधक तथा सामान्य सांसाररक प्राणी में यिी मुख्य अन्तर िै। दोनों ंके एक िी देवी की पूिा के हभन्न रूप िैं और उनके अन्तर में हभन्न तत्त्व िैं।

सांसाररक मनुष्य भी माँ की उपासना करता ि◌ै और संसार से हवरि साधक भी लक्ष्मी की उपासना करता ि◌ै। बाह्य दृहि से ये दोनों ◌ंप्रिाएँ एक ि◌ी समान प्रतीत ि◌ोती ि◌ैं; परन्तु ि◌ब एक बार लक्ष्मी की हवद्या तथा अहवद्या माया का रिस्य समझ में आ गया, तब सिंी तल से नीिं गम्भीरता में उतरने पर हवहदत ि◌ोता ि◌ै हक एक ि◌ी माता लक्ष्मी देवी की उपासना में आकाि-पाताल का अन्तर ि◌ै। सांसाररक कामनाओं ◌ंएवं तृष्णाओं ◌ंसे बद्ध एक सांसाररक मनुष्य एवं सांसाररक इच्छाओं ◌ंतथा तृष्णाओं ◌ंका सवथा त्याग करने वाले एक तत्त्व-हिज्ञासु के दृहिकोण में बहुत ि◌ी अन्तर ि◌ै।

माँ की मूहतथ एक ि◌ै, माँ भी एक ि◌ैं, सौभाग्यदाहयनी तथा रक्षाकाररणी-रूपा लक्ष्मी का स्वरूप सदा ि◌ी मंगलमय रिता ि◌ै। वि धवल पररधान से सुिोहभत ि◌ैं। वि स्वणथ आभू ण धारण हकये हुए ि◌ैं। ि◌क्ति तथा ऐश्वयथ का प्रतीक-रूप ि◌स्ती उनके पाश्वथ में बैठा हुआ ि◌ै। वि पद्मासनथथ ि◌ैं और उनके उभय ि◌ाथों ◌ंमें दो प्रफुक्तित पद्म ि◌ैं। इन पद्मों ◌ंका रिस्य तब प्रकि ि◌ोगा, ि◌ब ि◌म हविार करेंगे हक ये हकसके प्रतीक ि◌ैं। पूणथ प्रसुफुहित पद्म सवांगीण हवकास की पराकाष्ठा के प्रतीक ि◌ैं। इसी प्रकार ि◌ाथी भी दो हव य प्रकि करते ि◌ैं-सौभाग्य की ि◌रमावथथा, रािकीय वैभव व राज्य-ऐश्वयथ तथा परा ज्ञान। ि◌ाथी ज्ञान की पराकाष्ठा का भी प्रतीक माना ि◌ाता ि◌ै।

या देवी सववभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संक्तसर्ता ।
नमस्तसै्यै नमस्तसै्यै नमस्तसै्यै नमो नमः ॥'
(दुगाथसप्तिती : ५-५८)

िो देवी लक्ष्मी थवरूप से वयपत सवथ भूतों ◌ंमें माँ।
नमथ्कार ि◌ै नमथ्कार ि◌ै नमथकार ि◌ै नमो नम: ।।

पंचमराडत्र

ॐ श्री मिालक्ष्म्यै नमिः

सौभाग्य का पथ

सृडष्टक्तसर्डतडवनािानां ि◌क्तक्तभूते सनातडन ।
गुणािये गुणमये नारायडण नमोऽसुतु ते ।।'
(दुगाथसप्तिती : ११-११)

स्रिा, पालक, संिारक ि◌ीवों ◌ंमें ि◌ाश्वत ि◌क्ति माँ।

गुणी गुणाश्रय नारायहण को नमस्कार िै, तुम्हें नमिः॥

मिारे िीवन का िीवन, िमारे अक्तस्तव का एकमात्र आधार, िमारी सत्ता का सारतत्त्व, िमारी ितना का अन्ततथम थथल, िमारे िीवन का ध्येय व अक्तन्तम गन्तव्य-थथल, िमारी योग-साधना का सुफल, िुद्ध सत्-हित्-आनन्द-स्वरूपा भगवती माँ तुमको प्रणाम! माँ, तुम्हारे दुगाथ, लक्ष्मी तथा सरस्वती-रूप में तुम्हें बार-बार प्रणाम करता हाँ। तुम्हारी कृपा िम सब पर िो!

इस भूतल पर िीवन धारण तथा विन केवल लक्ष्मी-रूपा माँ की कृपा से िी सम्भव िै। माँ लक्ष्मी का आिीवाथद न िोने से यि संसार केवल दुिःख की यात्रा िी िोता, यि अश्श्शुरु-सररता में पररणत िोता। संसार के समस्त पदाथथ िी निावान् िैं और माँ दुगाथ सवथव्यापक रूप में उनमें अवथथान करती िैं। प्राणी िब संसार में िन्म ले कर प्रथम हदवस के प्रकिा का दिथन करता िै, तब से ले कर मृतुयु के समय हिर-हनिा में लिैने तक काल उसका पीछा करता रिता िै। उसे पग-पग पर मृतुयु के दिथन िोते िैं। वसुतुतिः इस लोक का िीवन दुिःख और मृतुयु का िी िीविन िै। अपने िुभ्र, तिैमयी तथा आनन्ददाहयनी लक्ष्मी रूप में माँ कि व हवनिा से पररव्याप्त िमारे इस िागहतक िीवन में प्रकिा, सौमनस्य, आनन्द, सौभाग्य और सुख को हवहवध मधुर रूपों ंके िारा सनुतुलन ला कर उसे सिनीय बना देती िैं। मानव–िीवन के प्रत्येक क्षेत्र में माँ अपने मंगलमय स्वरूप में हवरािती िैं। माता िी कल्याणी िैं, मंगलमयी िैं, सौभाग्यदाहयनी िैं। रिर के बृित्तर पररविे के मध्य में तथा व्यक्ति के कुहिु पाररवाररक क्षेत्र में लक्ष्मी िी अपने उज्ज्वल व आनन्दमय रूप में आहवभूथत िोती िैं हिससे उनके प्रकिा, उनकी मनोिरता तथा उनकी कृपा से सबका िीवन हिका रिता िै। इस प्रकार माँ दुगाथ तथा माँ लक्ष्मी इस सांसाररक िीवन में सनुतुलन की रक्षा कर िीव के इस अहनत्य तथा क्षणथथायी िीवन के कठोर सत्य को हवसूमृत करा देती िैं हिससे उसे िीवन के कुछ सिु पदाथों के उपभोग से िीवन में हंकंहित् सुख तथा आनन्द प्राप्त करना सम्भव िो पाता िै।

रिर के गौरव-हिह्न

इन उभय क्षेत्रों ंमें माँ लक्ष्मी के हदव्य स्वरूप के हव य की िानकारी प्राप्त करने का प्रयास अतीव उपयोगी तथा रोिक कायथ िै। इसको िान कर िी िम इन क्षेत्रों ंमें वतथमान मिालक्ष्मी की उपक्तथथहत बनाये रखने के कायथ में बुक्तद्धपूवथक अग्रसर िोंगें हिससे िम अपने लौहकक िीवन को सुख और समृक्तद्ध से पूणथ कर सकते िैं। मनुष्य के सामाहिक तथा रािीय िीवन के बृित् क्षेत्र में माता िी ऐसी िक्ति के रूपों ंमें प्रकि िोती िैं िो दुगाथ माता की भी ण तथा संिारकाररणी िक्ति का प्रहतकार करती तथा उसके व्यापक प्रभाव में सनुतुलन लाती िैं। िम पिले िी देख िुके िैं हक िगत् में िीवन के रक्षाथथ दुगाथ माता अपने अत्यावश्यक हवनािकारी तथा प्रलयकारी स्वरूप में हकस प्रकार प्रकि िोती िैं। माता िी की यि कल्याणकारी हवध्वंस की योिना न िोती, तो इिलौहकक िीवन हनतान्त अव्यवथथा तथा हवनिा में, अहनि और संकि में िी समाप्त िो िाता। इस भाँहत दुगाथ माता युद्ध, मिामारी, दुष्काल तथा बाढ़, अहग्न, भूकम्प िैसे प्राकृहतक प्रकोपों ंके हवकराल रूप से संिार करती िैं। दुगाथ माता संिार करती िैं िीवन की रक्षा के हलए, िीवन का सातत्य बनाये रखने के हलए। अपने िीवन में लक्ष्मी िी अपने दुगाथ माता के स्वरूप में हकये हुए कायों के प्रहतकार करने तथा सनुतुलन थथाहपत करने के हलए युद्ध के बदले िाक्तन्त-रूप में प्रकि िोती िैं। िब लक्ष्मी िी प्रसन्न िोती िैं, तब िगत् में सवथत्र िाक्तन्त िोती िै, िाहत–िहत तथा रािर-रािर में िाक्तन्त का प्रसार िोता िै, गृि-युद्ध से छुिकारा हमलता िै। लक्ष्मी िी के प्रसन्न िोने पर समृक्तद्ध िोती िै, उवथरता का प्रािुयथ िोता िै तथा िगत् िस्य से पूणथ िोता िै। रोग, कि और आिक्तन्त दूर िोते िैं। समिा के ऊपर अनुग्रि कर माँ हििुओं ंतथा क्तस्त्रयों ंको स्वास्थ्य प्रदान करती तथा उनका मंगल और कल्याण करती िैं। रािर के स्वास्थ्य-स्तर को उन्नत करती िैं। हिहकत्सीय व्यवसाय, हिहकत्सालय, अहग्निामक दल, आरक्षी दल आहद संरक्षक स्वरूप लक्ष्मी माता िारा भगवान् हवष्णुु की पालक–िक्ति प्रकि िोती िैं और प्राकृहतक प्रकोप का प्रहतकार

करती और मनुष्य के िीवन तथा उसकी सम्पहत्त की रक्षा करती िैं। अतिः रिनहयकों,ं िासनकताथओं ंतथा सामाहिक नेताओं ंके हलए ये संरक्षक रूप सामाहिक संरिना में लक्ष्मी की हवद्यमानता के सूिक िैं।

िििाँ इन वसुतुओं ंकी उपेक्षा की िाती िै, विााँ िम देखते िैं हक लोगों ंका सुख नि िो िाता िै, उनका हवकास अवरुद्ध िो िाता िै तथा ऐसे समाि और रिर का पररत्याग कर समृक्तद्ध िली िाती िै। इसी से प्रािीन सूमृहतकारों ंने यि हवधान कर हदया था हक प्रत्येक हनष्ठावान् प्रिासक को माता िी के इन स्वरूपों ंका ध्यान रखना िाहिए तथा माता लक्ष्मी का हिन वसुतुओं ंिारा आहवभाथव िोता िै, उन वसुतुओं ंकी समाि में उत्तरोत्तर वृक्तद्ध िो, इसके हलए उसे श्रमपूवथक यथािक्ति प्रयास करना िाहिए। देवालय, हवद्यालय, क्रीिाथथल, उद्यान, पुष्पवाहिका, सरोवर इत्याहद मानव-समाि के समस्त पदाथथ हवष्णुु–िक्ति लक्ष्मी िी के प्रकि स्वरूप िैं। इन सब प्रतीकों ंिारा िी माता लक्ष्मी व्यि िोती िैं। इसी से िम देखते िैं हक इस धमथभूहम भारत में मक्तन्दर के हबना कोई भी थथान निीं ं िै। भले िी वि सामान्य नन्ााँ-सा ग्राम िो, उसमें कुछ इने-हगने छप्पर के घर िों;ं पर विााँ पर ग्राम-देवता अवश्य िोंगे, भले िी उनके हलए सामान्य पक्का मक्तन्दर न िो और वि हकसी वृक्ष की छाया में िी हवरािते िों,ं पर ग्रामवासी उनकी पूिा-अिथना करते िैं। हिस ग्राम में ऐसा मक्तन्दर निीं ंिोता, विााँ कोई भी धमाथनुरागी पुरुि पााँव निीं ंरखेगा। वि किेगा हक विााँ लक्ष्मी का वास निीं ंिै। वि उससे दूर रिता िै। हिस थथान में मनुष्यों ंतथा पिुओं ं के पीने के िल की सुव्यवथथा निीं ंिोती, विााँ लक्ष्मी हनवास निीं ंकरतीं।ं पुण्यात्मा िन उस थथान से दूर िले िायेंगे। इसी से सभी धाहमथक मिानुभाव, सम्पहत्तवान् उदार गृिथथ िन दि भर में थथान-थथान पर लक्ष्मी के इस प्रकार के व्यि स्वरूप की थथापना करने में अपनी ईश्वर-प्रदत्त सम्पहत्त का सदुपयोग करते िैं। वृक्षारोपण करना, कूप तथा तिाग खुदवाना, उद्यान तथा क्रीिाथथल दान करना, ििााँ मक्तन्दर न िों ंविााँ मक्तन्दर हनमाथण करवाना और िीणथ–िीणथ मक्तन्दरों ंका िीणोद्धार करवाना, याहत्रयों ंकी हवश्राक्तन्त के हलए धमथिाला बनवाना, श्रान्त याहत्रयों,ं पुण्यात्मा सन्तों,ं भगवद्-भिों,ं साधुओं,ं अभ्यागतों ंतथा साधकों ंके हलए अन्नक्षेत्र खोलना-ये सब धमथ-कायथ माने िाते थे और अब भी माने िाते िैं। यि मिान् पुण्य-कायथ िै हिससे दाता को इस भूलोक और परलोक में सुख की प्राक्तप्त िोती िै। हिक्षा अथवा ज्ञान-दान भी अिलक्ष्मी में से एक हवद्या-लक्ष्मी का स्वरूप माना िाता िै। इस भााँहत िमारे सूमृहतकारों ंने मिालक्ष्मी का हवहवध रूपों ंमें इन थथानों ंमें आहवभाथव माना िै। अतिः प्रत्येक नागररक का कतथव्य िै हक वि समाि तथा दि में इनकी वृक्तद्ध का प्रयास करे, हिससे दि में समृक्तद्ध की अवथथा सदा बनी रिे।

रारीय नेताओं ंका सवोपरर कतथव्य

हकसी भी दि अथवा रार के नेता, सामाहिक कायथकताथ तथा प्रिासक के हलए इतना िी मान लेना पयाथप्त न िोगा हक लक्ष्मी के इन स्वरूपों ंकी केवल रक्षा तथा वृक्तद्ध िी उनका प्राथहमक कायथ व कतथव्य िै। उन्ें इसे भी सदा स्मरण रखना िोगा हक इनकी रक्षा और वृक्तद्ध में िी सब लोगों ंके कल्याण तथा सुख का बीि समाहित िै। इस भााँहत व्यक्ति को िब इस िगत् की वास्तहवकता का भान िै तथा िब तक वि बाह्य वसुतुओं ंकी सत्यता अनुभव करता िै, तब तक वि इन वसुतुओं ंकी अवगणना न करे, यि देखना उसका कतथव्य िै। हिन्दू-धमथ का खोिा स्वीयकरण, व्यक्ति के कतथव्य के हव य में तुरुहिपूणथ हविार, उपहन दों ंके वेदाक्तन्तक ज्ञान की अपि-इन हवहवध कारणों ंसे हिन्दू–िाहत के िताक्तियों ंपुराने यथाथथ स्वरूप की िम दुभाथग्यपूणथ उपेक्षा करने लगे। इसके पररणाम-स्वरूप वैराग्य के, भगवत्साक्षात्कार के तथा संसार की अहनत्यता के अपररपक्व हविारों ंको ले कर समस्त भारतवासी मिालक्ष्मी के इन स्वरूपों ंके पररक्षण के प्रहत उदासीन बन गये। वे यि मानते थे हक ये सब केवल माया के क्षेत्र की वसुतुएाँ िैं और इन पर ध्यान देने की आवश्यकता निीं ंिै एवं तथाकहथत पारलौहकक उन्नहत के हलए उनसे मुख मोि लेने में िी दािथहनक ज्ञानमय िीवन की पराकाष्ठा िै। बाह्य िगत् में लक्ष्मी िी के इन स्वरूपों ं के प्रहत इस प्रकार की उदासीन वृहत्त रखने के हलए हिन्दू–िाहत को भारी मूल्य िुकाना पिा। माता िी के अनमोल स्वरूप-रूपी दि की स्वतन्त्रता, समृक्तद्ध तथा रारीय गौरव िम खो बैठे। िबसे हिन्दू–िाहत के अहधकांि लोगों ंने

तत्त्वज्ञान के भूल-भरे हविारों ंके कारण मिालक्ष्मी िी को त्याग हदया तथा बाह्य िीवन में दृढ़ यथाथथवाद तथा व्याविाररक आदिथवाद के रूप में उनकी उपासना को हतलांहिल दे दी, तभी से माता िी ने हिन्दू रिार को त्याग हदया। इसी से हिक्षा की उपेक्षा की गयी तथा इस संसार के अन्य सभी सामाहिक कायों की भी यि मान कर अवगणना की गयी हक वे अज्ञानिन्य िैं, अतिः उनका सम्पादन अनुपयुि िै। सृहि-रिना के थथूल स्तर पर िारीररक ितना से पूणथतया आबद्ध मनुष्य ने भौहतक िगत् की वास्तहवकताओं ंसे अपने नेत्र बन्द कर हलए तथा ये
सभी पदाथथ क्षहणक तथा नािवान् िैं, ऐसी घो णा कर उन्िें त्याग देने का प्रयास हकया। इसका पररणाम यि हुआ हक िम पर लक्ष्मी िी की हवरोधी िक्ति तामस प्रकृहत का आहधपत्य िो गया, हिससे िमें दो ितकों ंतक दासता
झेलनी प़िी। िो बाह्य िगत् में लक्ष्मी िी के सिी अथों में उत्तम उपासक थे, उनका दास बनना प़िा। अाँगरेि लोग लक्ष्मी िी की अिथना सिुरु रूप से करते थे, अतिः भारतव थ में िो-कुछ श्रेष्ठ था, िो वैभवप्रदायक तत्त्व थे, वे सब पाश्चात्य िगत् को िले गये; क्ोंहक वे लोग भौहतकवादी िोते हुए भी लक्ष्मी िी के उपासक थे। िब आधुहनक भारत के सन्तों ंतथा मिान् हविारकों ंने समझा हक तामस के अधीन बन कर िमने लक्ष्मी िी की अवगणना की िै
और यि अवगणना िी भारत की समस्या के मूल में िै, तब उन लोगों ंने तत्काल िी हिन्दू-रिार को गहतिील सामाहिक तत्त्वज्ञान का उपदेि हदया। भारत के इन मिान् उद्धारकों ंने हिन्दू-रिार को अपनी तमोहनिा से िागने, हनिःस्वाथथ सेवा में हनमग्न िोने तथा िीवन के प्रहत यथाथथवादी दृहिकोण तथा अहभवृहत्त अपनाने के हलए ििख-घो
हकया। इस भााँहत नव-हनमाथण आया तथा तत्त्वज्ञान-सम्बन्धी अपररपक्व तथा सदो हविार मनुष्य के मक्तस्तष्क से हनकाल बािर हकये गये। उन्िें यि भी समझाया गया हक िब तक उनके हलए अपने िरीर की सत्यता बनी हुई िै तथा िब तक वे ितना के ऊध्वाथरोिण की, आत्म-हवकास की ऐसी क्तथथहत तक निीं ंपहुाँिोते िााँ अपने हृदय
के अन्ततथम प्रकोष्ठ में वास्तहवक रूप में यि अनुभव निीं ंकर पाते हक यि संसार मात्र क्षहणक स्वप्न िै और अव्यि िी एकमात्र िरम सत्य िै, तब तक उन्िें माता िी का कमथहनष्ठ उपासक बना रिना िाहिए। अपने हवकास की प्रारक्तम्भक अवथथा में बहुत बार िम यि मानने की भूल कर बैठते िैं हक िम बहुत िी ऊाँिी आध्याक्तत्मक भूहमका में पहुाँि गये िैं। इसके पररणाम-स्वरूप हिन वस्तुओं ंकी िमें अवगणना निीं ंकरनी िाहिए, उनकी अवगणना कर बैठते िैं। कालान्तर में हिन वस्तुओं ंका त्याग करना िै, वे िी प्रारम्भ में तो उि से उितर आरोिण के हलए क्रहमक सोपान के समान िोती िैं। तमस् से उद्‌भूत उपेक्षा-वृहत्त हिसे िम भूल से तत्त्वज्ञान तथा त्याग मान बैठे थे, उसकी ओर िमारा ध्यान आकह थत हकये िाने पर िम उसे दूर कर अब रिोगुण के युग में प्रवेि कर िुके िैं। समग्र देि तथा समाि के कल्याण की उत्साििपूणथ प्रवृहत्तयों ंमें लग िाने के हलए भारत देि तथा हिन्दू-समाि को झकझोर कर िागृत कर हदया गया िै। इसमें रिोगुण की िंिलता की प्रधानता िम अनुभव कर सकते िैं। यि बहुत िी िुभ हिह्न िै और यहद ये प्रवृहत्तयााँ िालू रिें तथा लक्ष्मी िी अपने अहवद्या-माया-स्वरूप
में िमारी हविाल दृहि तथा ज्ञान को आच्छाहदत न कर लें, तो हिन्दू–िाहत आध्याक्तत्मक उन्नहत की पराकाष्ठा पर अवश्य पहुाँि िायेगी।

कठोर ितावनी

इस भााँहत एक व्यक्ति के आध्याक्तत्मक िीवन में 'वि िरीर निीं ंिै, वरन् िरीर और मन से परे िुद्ध आत्मा िै' यि सत्य आत्म-साक्षात्कार की अक्तन्तम अवथथा में भले िी सि िो, पर यहद कोई साधक मूखथतावि अपनी आध्याक्तत्मक साधना का आरम्भ इस मान्यता से करता िै, तो उसे िीघ्र िी पश्चात्ताप करना िोगा; क्ोंहक इस भौहतक िगत् के हनयम बहुत िी कठोर िैं और यहद उनका उिंघन हकया िाये, तो उसका मूल्य तुरन्त िी िुकाना िोता िै। यहद कोई वेदाक्तन्तक भावों ंमें ऊाँिी उ़िान भरता िै और वि आत्म–िैतन्य की परमोि अवथथा को प्राप्त कर िुका िै, इसहलए उसके समस्त कतथव्य िो िुके िैं, ऐसा मान कर अपने िरीर की उपेक्षा करता िै और उसे उहित पो ण तथा हवश्राम दे कर स्वास्थ्य ठीक निीं ंरखता, तो योग साधना के हलए प्राप्त इस सवोत्कृि साधन 'मानव–िरीर' को अपूरणीय क्षहत पहुाँिाती िै। अहत-आकांहक्षत हिित्तिुक्तद्ध तथा िररत्र की हनमथलता िो

हनिःस्वाथथ सेवा िारा िी प्राप्त िो सकती िै, उस सेवा का एकमात्र साधन यि मानव िरीर रोगग्रस्त िोने से उसकी साधना की प्रगहत अवरुद्ध िो िाती िै। ऐसी दिा में एकमात्र भगवतूकृपा िी उसे बिा सकती िै। उसे स्वयं भी अपनी भूलों ंको सुधारने का प्रयत्न करना िोगा।

हिस भाँहत व्यक्तिगत िीवन में, हिस दिे से साधना कर उि आध्याक्तत्मक क्तथथहत में पहुँिना िोता िै, उस दिे की प्रारम्भ से िी अवगणना करने से अवांछनीय पररणाम िोते िैं, उसी भाँहत तामस प्रवृहत्तयों ंमें पहतत िोने पर रािरीय िीवन में भी िोता िै। भारतीय समाि को इस बात का हविार प्रारम्भ में िी आना आवश्यक था और इससे बिना िाहिए था; परन्तु उसने बहुत िी क़िवे अनुभव के पश्चात् हिक्षा ग्रिण की। अब िमारे नेताओं,ं सामाहिक कायथकताथओं,ं रािनीहतज्ञ पुरु ों ंतथा अपने पूज्य गुरुदेव िैसे आध्याक्तत्मक उपदिेकों ंने धमथ तथा हनिःस्वाथथ सेवा पर आधाररत सहक्रय प्रवृहत्तयों ंका अहभनन्दनीय कायथ प्रारम्भ हकया िै, हिससे समाि तथा रािर में नव-हनमाथण की लिर दौ़ि िायेगी। इसके पररणाम स्वरूप माता सरस्वती के साम्राज्य तक पहुँिने के हलए आवश्यक िाक्तन्त, समृक्तद्ध, रािरीय आरोग्य तथा उन्नहत, रािरीय साक्षरता तथा सभी को उि हिक्षा प्राक्तप्त की क्तथथहत आयेगी, हिससे रािरीय तथा आध्याक्तत्मक नव-हनमाथण िीघ्र िो सकेगा। इसका कारण यि िै हक समाि तथा रािर में लक्ष्मी माँ के व्यापक आहवभाथव के हबना उि आध्याक्तत्मक ज्ञान-स्वरूपा सरस्वती के आहवभाथव की आिा निीं ंकी िा सकती; क्ोंहक यि किा िाता िै हक कुषुहधत उदर और नग्न िरीर वाले व्यक्ति को धमथ की हिक्षा निीं ंदी िा सकती। अतएव, रािरीय तथा सामाहिक िीवन की समस्याओं ंके प्रहत िमारी दृहि वास्तहवक िोनी िाहिए। िमें अपने रािर के लोगों ंको लक्ष्मी के ऐसे स्वरूप प्रदान करने िोंगे, हिनसे वे स्वथथ तथा सुखी िीवन-यापन कर सकें। सवथतोमुखी समृक्तद्ध, साक्षरता तथा स्वास्थ्य के सुि वातावरण में िी उित्तर आध्याक्तत्मक िीवन िीने की आकांक्षा अंकुररत िोगी। ये आकांक्षाएँ िममें हवद्यमान िैं, पर वे सुप्त भाव में िैं। रािर तथा समाि में लक्ष्मी के अभाव के कारण उन्ें लोगों ंके हृदय में प्रकाि में आने का सुयोग निीं ंहमलता, क्ोंहक दाररद्र्य से उि आकांक्षाएँ कुक्तित िो िाती िैं। िब कुषुधा उदर को पीह़ित कर रिी िो, तो उि आदिों का हविार उदय निीं ंिोता।

हवष्णुिक्ति लक्ष्मी के इन प्रकि स्वरूपों ंके अपने हवहिि गुण िैं और प्रत्येक िाहत व रािर के िीवन में उनका हविेष मित्त्व िै। अतिः लक्ष्मी की उपासना में प्रहतहष्ठत िो कर अन्त में हववेक तथा वैराग्य से एवं लक्ष्मी की सिायता से सरस्वती की आराधना करनी िोती िै। भारतीय संसृ्कहत की यिी सनातन धारा िै।

या िीः स्वयं सुकृडतनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतडधयां हृदयेषु बुक्तद्धः ।।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म पररपालय देडव डवश्वम् ।।
(दुगाथसप्तिती :४-५)

पुण्यवान् के गृिों ंमें रिती बन कर स्वयं िो लक्ष्मी माँ।
पापी के गृि दररद्रता बन, बुक्तद्ध बन सत्-िन हृद माँ।
सज्जन में श्रद्धा-स्वरूप िो, कुलोत्पन्न में लज्जा माँ।
देवी! करो हवश्व का पालन, िम सब करते नमो नमिः ।।

षष्ठराडत्र

ॐ मिालक्ष्म्यै ि हवद्मिे हवष्णुपत्न्यै ि धीमहि तन्नो लक्ष्मीः प्रिोदयात्

गृि तथा हृदय में सौभाग्यदाहयनी देवी

रिणागतदीनातवपररत्राणपरायणे ।
सववस्याडतव िरे देडव नारायडण नमोऽस्तु ते ।।

(दुगाथसप्तिती : ११-१२)

दीन आतथ िो िरण में आये उसकी रक्षा में रत माँ।
नारायहण! सबकी दुि:खिताथ, नमस्कार िै तुम्हें नमिः ।।

सृहि की रक्षाकाररणी देवी िननी तुम्हें कोहि-कोहि नमस्कार! हवहभन्न नाम-रूपों ंके मध्य में हिस िक्ति का हवकास िै, माँ! तू िी उसका आधार िै। तुम्हीं ंिमारे मन में साधन–िक्ति-रूप में िाा उदय करती िो, िमारे योग का पररररक्षण करती िो तथा िमारी िेतना में िुद्ध ज्ञान-रूप में प्रकाहित िो कर िमारी समूपूणथ सत्ता को उद्भाहसत करती िो। तुम्हें बार-बार प्रणाम।

श्री लक्ष्मी अथवा हवष्णुि–क्ति अथवा नारायणी-रूप में माँ की आराधना का तृतीय पहवत्र हदवस िै। िाि नवरात्र-पूिा के छठे हदवस को व्यक्ति के अन्तरंग गृि-क्षेत्र में तथा पाररवाररक िीवन में लक्ष्मी माता हकस प्रकार प्रकि िोती िैं, इस पर हविार करने का िमें दुलथभ िाीवाथद तथा सद्भाग्य प्राप्त हुआ िै।

हिज्ञासु, साधक तथा मुमुक्षु के आन्तर िीवन में माँ दैवी सम्पद् के रूप में प्रकि िोती िैं। इन दोनों ं स्वरूपों ंमें माता िी िम सबके हलए हवि रूप से तथा व्याविाररक रूप से मित्त्व की िैं, क्योंहक माता िी के दोनों ंस्वरूपों ंका ज्ञान िोने से िी माता िी हकसमें हवद्यमान िैं और हकसमें हवद्यमान निीं ंिैं, यि िम िान सकते िैं, हिससे हिन वस्तुओं ंमें माता िी हवद्यमान िैं उनके पररररक्षण का प्रयास करेंगे और हिन पदाथों में वे हवद्यमान निीं ंिैं, उनमें भी वे व्यि िों,ं इसके हलए िम अपना प्रयत्न िालू रखेंगे।

महिमामयीभारतीय नारी

इस गौरविाली दे भारतव थ में गिाथस्थ्य िीवन में लक्ष्मी देवी की कल्ना सिमिु िी अद्‌भुत तथा अनुपम िै। गि िी लक्ष्मी िी का आवास-थथान माना िाता िै िााँ माता िी पूिनीया गृहिणी के स्वरूप में वििीती िैं। गृि्िीवन तथा किुम्ब के सौख्य, सौभाग्य, मांगल्य तथा हवकास की अहधष्ठात्री देवी को 'गृिलक्ष्मी' किते िैं, यि मि सब िानते िैं। गृिलक्ष्मी साक्षात् लक्ष्मी देवी का साकार रूप िै। िमारी भारतीय संसूकृहत का यि अहितीय रूप पाश्चात्य दिों ंमें दृहिगत निीं ंिोता। पाश्चात्य दिों ंमें नारी अहधकांितिः पत्नी-रूप में, िीवनसंहगनी के रूप में पुरु के समान भागीदार मानी िाती िै। इतना िी निीं,ं वि सभी कायथक्षेत्रों ंमें पुरु के साथ हवि ािधकार की स्पधाथ करने के साथ िी न केवल अपने समानाहधकार की अहपतु उससे भी आगे अपने स्वतन्त्र व्यक्तिव का भी आग्रि करती िै। इसके हवपरीत हिन्दू-हृदय में नारी माता िै। सि हिन्दू की िेतना में नारी का यि मातृरूप सदा हनवास करता िै। इस पुण्य-भूहम में िन्म-ग्रिण का यिी सौभाग्य िै; क्योंहक इस भावना िारा मि ईश्वर के मातृरूप का साक्षात्कार करने की उन्नत कक्षा तक आरोिण कर सकते िैं। यि मातृभाव अथवा समूपूणथ नारी्िहत में माता का दिथन अपने मन और हृदय को पहवत्र करने का साधन िै। इसके िारा िम इतनी उन्नतावथथा को प्राप्त िो सकते िैं िााँ हदव्य ज्योहत से उद्भाहसत िो उठना सुलभ िो िाता िै।

इस भााँहत हिन्दू के हलए गि लक्ष्मी का आलय िै। इसी से हिन्दू-समाि में प्रत्येक गि िी मांगल्य व श्री का मक्तन्दर िै, गृिलक्ष्मी-रूपा लक्ष्मी का आवास-थथल िै। लक्ष्मी िी की िक्ति, महिमा तथा ओैस गृिलक्ष्मी में सतीव अथवा पाहतव्रत्य- धमथ के रूप में प्रकाहित िोते िैं। इससे िी उनका ऐश्वयथ, यि तथा आन्तररक प्रकाि गहठत िोता िै। गृिलक्ष्मी की यि िक्ति हवश्व-भर में अहितीय िै। एक 'पाहतव्रत्य' िि में िी स्त्री-धमथ की समूपूणथ भावना, समूपूणथ कल्ना समाहित िै। साधक तथा हिज्ञासु के आध्याक्तत्मक िीवन में, योग के क्षेत्र में िो थथान गुरु का िै गृिलक्ष्मी के गृि-क्षेत्र में विी थथान उसके पहतदेव का िै।

त्वं डि डवषुणुडववरंडचस्त्वं त्वंच देवो मिश्वरः ।
त्वमेव िक्तक्तरूपोऽडस डनगुवणस्त्वं सनातनः ।।'

तुम्हीं ंहवषुणु िो, तुम हवरंहि िो, तुम्हीं ंमिेश्वर िै गुरुदेव ।
िक्तिरूप िो, तुम हनगुथण िो और सनातन िो गुरुदेव ।।

इस श्लोक के कथनानुसार साधक हिस प्रकार गुरु को साक्षात् भगवान् समझता िै, पत्नी भी अपने पहतदेव को वैसा िी समझती िै। स्त्री के हलए पाहतव्रत्य िी इस िीवन में अिथनीय श्रेष्ठतम सम्पहत्त िै। इससे वि केवल एक असाधारण नारी बनती िै, इतनी िी बात निीं ंिै, वि इस संसार में साक्षात् देवी के समान थथान पाती ि; क्योंहक सतीव माँ लक्ष्मी की िी एक िक्ति-हवि िै। इसके साथ िी इस आन्तररक गुण सतीव के बाह्य अहभव्यक्तिकरण का रूप िील िै। हिन्दू-नारी के हलए िील उसका अलंकार-स्वरूप िै। वि दूसरे पुरु ों ंको देखने और अपने को दूसरे पुरु ों ंको हदखाने की हिन्ता निीं ंकरती। यि एक उन्माद िै, रोग िै िो वतथमान युग में खूब हवकहसत िो रिा िै। आि व्यक्ति यि िािता िै हक दूसरों ंका ध्यान उसकी ओर आकह थत िो। इस उद्देश्य से रंगीन विभू ा और अन्य प्रत्येक प्रसाधन, िो घोर अन्धकार में हनमग्न व्यक्तियों ंके उपिाऊ मक्तस्तष्क ने आहवषूकृत कर रखे िैं, का उपयोग हकया िाता िै हिससे हक दूसरे लोगों ंका ध्यान आकह थत हकया िा सके। यि िीलि िैसे उदात्त एवं श्रेष्ठ गुण के अपरोक्ष रूप से हवपरीत या प्रहतकूल िै। िील की अविेलना करने तथा दूसरों ं

को आकह थत करने के उन्माद को प्रश्रय देने से लक्ष्मी देवी का अपमान िै। इसी का नाम अलक्ष्मी िै। यि बात सदा स्मरण रखनी िै हक हिन्दू-आदिों में िील की रक्षा एक मिद् गुण िै। इसी गुण के माध्यम से भारतीय नारी के मध्य में माँ लक्ष्मी स्वयं िी आहवभूथत िोती िैं।

लक्ष्मी गृि में गृिलक्ष्मी के व्यक्तिव में वाणी व व्यविार में सुिीलता, मधुरता तथा िारुता के रूप में अहभव्यि िोती िैं। नारी को कभी भी परु निीं ंिोना िाहिए। हिन्दू-गृि की लक्ष्मी के श्रीमुख से कभी भी रूढ़ ि, कठोर वाणी और ककथि विन निीं ंहनकलने िाहिए। अपना आदिथ िी यिी िै; क्ोंहक हिन्दू-भावना में िारुता और मधुरता गृिलक्ष्मी का अंग माना िाता िै। लक्ष्मी को समादृत करने और उनके पूिन का एक रूप िै कठोर वाणी का सवथा त्याग। यि बात सभी गृि-देहवयों ंको स्मरण रखनी िाहिए; क्ोंहक यिी घर के सिे सुख, िाक्तिन्त और कल्याण के आहवभाथव में सिायक िोता िै।

मांगल्य-सूत्र, िो हक गृिलक्ष्मी का एक हवहिि हिह्न िै, को धारण करने के अहतररि दो अन्य मित्त्वपूणथ वसुतुएँ भी िैं हिनसे सभी को अलंकृत हकया िाता िै; हकनुतु लोगों ंको इस प्रथा का सम्यक् ज्ञान निीं ंिै। हिन्दू-गृि में लक्ष्मी दो अन्य रूपों ंमें भी हवद्यमान रिती िैं अथाथत् वि आदिथ हिन्दू-नारी के अलंकार के दो रूपों ंमें-पुष्प के रूप में और हतलक के रूप में हवद्यमान रिती िैं। हिन्दू-नारी को हतलक के हबना कभी निीं ंरिना िाहिए। मस्तक पर ब़िे आकार का हतलक धारण करने का एक हविे तात्पयथ और एक गम्भीर तथा आवश्यक कारण िै हिससे लोग अवगत निीं ंिैं। इस बात को हनधाथन्त रूप से स्वीकार करना िाहिए हक हतलक को धारण करने की उभय रूप से अत्यहधक सिी आवश्यकता तथा मित्त्व िै-सूक्ष्म रूप में उस स्त्री के हलए िो हतलक धारण करती िै और थथूल दृहि से उन लोगों ंके हलए हिनें व्यविार-काल में उसके सम्पकथ में आना प़िता िै। इसी भाँहत पुष्प धारण का भी अपना मित्त्व िै। पुष्प लक्ष्मी के प्रहि रूप िी िैं, अतिः उनें भी धारण करना िाहिए; हकनुतु िमें कभी भी यि हवस्मरण निीं ंकरना िाहिए हक माँ लक्ष्मी हवद्या माया और अहवद्या माया-इन दोनों ंरूपों ंमें िी कायथ करती िैं। अतिः उनके इस अहवद्या-स्वरूप की उपासना ब़िी िी सावधानी hat H करनी िाहिए और हनत्यप्रहत उनसे प्राथथना करनी िाहिए हक वि िमें अपने इस स्वरूप की क्रि़िा से सुरहक्षत रखें और अपने हवद्या-रूप से िमारा कल्याण करें।

देवी लक्ष्मी गृिलक्ष्मी के रूप में अहभव्यि िोने के अहतररि पहतदेव के प्रहत सतत पूज्य भाव रखने और पहत के माध्यम से ईश्वर की हनरन्तर स्वैक्तच्छक आत्मत्यागमयी सेवा िारा भी अहभव्यि िोती िै।

श्री लक्ष्मी िी स्वयं इस उतूकृि पहत-सेवा का सविो उदािरण प्रसुतुत करती िैं। वैष्णवों ंकी हविारधारा में परमा माता वैकुिाहधपहत हवषुणु की हिर-सेहवका मानी गयी िैं। वि स्वयं सवथदा भगवान् हवषुणु की पद-सेवा में रत रिती िैं। श्री लक्ष्मी देवी सम्बन्धी यि धारणा अतीव मित्त्वपूणथ िै और प्रत्येक आदिथ हिन्दू-नारी को उहित िै हक वि लक्ष्मी देवी के इस आदिथ को स्मरण रखे और उसे अपने हनिी िीवन में िररताथथ करे।

गृि में लक्ष्मी िी का आहवभाथव

यहद िम गृिलक्ष्मी के व्यक्तिव से आगे बढ़ कर गृि के िारों ंओर ध्यान दें तो पायेंगे हक स्वच्छता लक्ष्मी के आवास का एक मित्त्वपूणथ रूप िै। घर के पास धूहल और गन्दगी अलक्ष्मी का आवास िै। दहक्षण भारत में इसे दाररद्र्य किा िाता िै।

इसके अनन्तर दीपक की बारी आती िै। गोधूहल और सूयाथस्त का समय हनकि आते िी िम देखते िैं हक प्रत्येक हिन्दू-घर में दीप प्रज्वहलत कर उसे प्रणाम करते िैं। इस भाँहत अन्धकार के आरम्भ िोने से पूवथ िी धवल

प्रकाि का आगमन िोता िै। इस प्रथा का प्रत्येक हिन्दू-घर में अनुसरण हकया िाता िै, क्ोंहक लोगों ंकी यि मान्यता िै हक प्रकाि अथवा ज्योहत गृिक्षेत्र में प्रकि िोने वाली लक्ष्मी का एक स्वरूप िै।

तदुपरान्त देव-देवी की पूिा को लें। देव-देवी की पूिा अत्यावश्यक िै। ििााँ देवों ंकी पूिा निीं ंिोती, विााँ लक्ष्मी का वास निीं ंिोता िै। वि अहवद्या-रूप में भले िी आ िाये; हकन्तु ििााँ देव-पूिन निीं ंिोता, आपाततः ऐश्वयथ-लाभ िोने पर भी, अन्त में उस घर से वैभव िाता रिेगा और दाररद्र्य, दुःख और सन्ताप हनश्चय िी अपना आहधपत्य िमायेंगे। यि एक आवश्यक बात िै हिसे इस पुण्य-भूहम के हिन लोगों ंपर पाश्चात्य हवचारधारा और पहश्चमी रिन-सिन का प्रभाव हदन-प्रहत-हदन बढ़ता िा रिा िै, वे यहद वास्तव में अन्ततः अपना सुख और पररवार की समृक्तद्ध चािते िैं, तो स्मरण रखें और इससे सावधान रिें। देवों ंकी पूिा करनी चाहिए। पुण्य-पवथ तथा परम्परागत त्योिारों ंको मनाना अपने गृि-िीवन का सवोपरर मित्त्वपूणथ भाग िै। इस पहवत्र देि में मनाये िाने वाले िन्मािमी, रामनवमी इत्याहद उत्सवों ंकी अविेलना की गयी, तो उस घर में मंगल निीं ंरिता, ऐसा िम कि सकते िैं।

दान : गृिथाश्रम में लक्ष्मी मााँ का यि भी एक मित्त्वपूणथ आहवभाथव िै। गृिथ को तो अन्य तीनों ंआश्रम वालों ंके साथ उसके पास िो कुछ भी िै, उसमें भागीदार बना कर उपभोग करने का अपूवथ सौभाग्य प्राप्त िै। अध्ययन-रत हनधथन ब्रह्मचारी, पररव्राि क संन्यासी तथा सवथस्व त्याग कर संन्यासाश्रम की पूवथ तैयारी रूप पहवत्र िीवन-यापन करने वाले वानप्रथथ-इन सबके हनवाथि का उत्तरदाहयत्व गृिथ पर िै। इन तीनों ंआश्रमवाहसयों ंको दान देने का दुलथभ सद्भाग्य हितीय आश्रमी गृिथ को िी प्राप्त िै। इस अवसर का लाभ उठाने से गृिक्षेत्र में लक्ष्मी देवी का प्राकट्य िोता िै। दान-रूप में वि हवष्णु भगवान् की पो क िक्ति का कायथ करता िै। इससे धमथ की रक्षा िोती िै और अन्य आश्रमों ंकी परम्परा बनी रिती िै।

आहतथ्-सत्कार लक्ष्मी का एक मित्त्वपूणथ स्वरूप िै। हिस घर से अहतहथ हवमुख िोता िै, विााँ लक्ष्मी हनवास निीं ंकरती; परन्तु ििााँ याचक और अहतहथ का स्वागत िोता िै, विााँ लक्ष्मी पूणथ िोस से रिती िैं और घर को आिीवाथद देती िैं। अहतहथ-सत्कार, दानिीलता और उदारता-ये लक्ष्मी िी के मित्त्वपूणथ स्वरूप िैं हिनका भावुक हिन्दू-गृिथ को श्रमपूवथक धमथ-भाव से पालन करना चाहिए।

भारतीय गृि में और हविेष कर हिन्दू-गृि में अन्य दो वस्तुओं ंमें भी माता लक्ष्मी िी का हनवास माना िाता िै। प्रथम वस्तु िै तुलसी का पहवत्र पौधा । तुलसी के पौधे के हबना कोई घर निीं ंरिना चाहिए; क्ोंहक इस भूतल पर तुलसी के पौधे के रूप में साक्षात् लक्ष्मी देवी हनवास करती िैं। परमात्मा की वि साक्षात् हवभूहत िैं। इस हव य में मैं कि सकता हाँ हक मिारािरीय इस सम्बन्ध में बहुत सावधान रिते िैं। वे ििााँ किीं ंभी रिें, वे करोिपहत िी क्ों ंन िों,ं भले िी वे बडे़ नगरों ंमें भौहतकवाद के पयाथवरण में रिते िों, चार-पााँच मंहिलों ंवाले मकान में सैकडों ं हकरायेदारों ंके साथ रिते िों,ं पर आप देखेंगे हक प्रत्येक मिारािरीय घर में हमट्टी का एक छोिा-सा पात्र िोगा हिसमें तुलसी का पौधा उगा िोगा। घर में प्रवेि करते िी तुलसी का दिथन िोगा। हिस गृि में इस हवहि रूप में माता िी का पूिन िोता िै, उस घर को वि आिीवाथद देती िैं। कोई भी मिारािरीय गृिलक्ष्मी तुलसी के पौधे को एक-दो पुष्प अहपथत हकये हबना अथवा कपूथर-आरती हकये हबना अथवा एकाध प्रदहक्षणा हकये हबना अथवा भावपूवथक हिर झुका कर तुलसी देवी का वन्दन हकये हबना कुछ भी ग्रिण निीं ंकरती।

लक्ष्मी देवी का दूसरा स्वरूप िो दुभाथग्य से सभी नगरों ंके हिन्दू-गृिों ंसे तीव्र गहत से हवलुप्त िोता िा रिा िै, वि िै गौमाता। एक-दो पीढ़ी पूवथ हिन्दू-घरों ंमें प्रहतहदन गोमाता के पूिन की प्रथा प्रचहलत थी। भावुक हिन्दू-गृहिणी गो-पूिा हकये हबना भोिन निीं ंकरती थी। नगरों ंमें अब गाय का दिथन दुलथभ िो गया िै। समस्त दुग्ध दुग्धिालाओं ंसे बोतलों ंमें भर कर पहुाँचाया िाता िै। इसके पररणाम-स्वरूप नगरों ंमें से यि प्रथा प्रायः लुप्तप्राय िी चली िै। एक हिन्दू-गृिलक्ष्मी के हलए हनत्य गो-पूिन की प्रथा चालू रखना िक् न िो, तो इसके प्रायहश्चत्त-

स्वरूप उसे व थ में नूयूनाहतनूयून एक या दो हदन अवश्यमेव गो-पूिन करने का हनश्चय लेना िाहिए। व थ में एक हविे हदन गो-पूिा के हलए पृथक् रखा गया िै और उस हदन लोग िािाँ भी गाय हमलती िै, विीं ंउसकी पूिा की व्यवथथा करते िैं। पहवत्र गोमाता, िो एक समय हिन्दू-मान्यतानुसार वैभव का एक मिान् प्रतीक मानी िाती थी और हिस गोमाता में लक्ष्मी िी साक्षात् प्रकि रूप में हवरािमान िैं, उस गोमाता की पूिा का अहधकाहधक अवसर प्रसुतुत करते रिना िाहिए। गृि में लक्ष्मी िी के आहवभाथव का इतना िी वणथन पयाथप्त िोगा।

साधक की आध्याक्तत्मक सम्पहत्त

अब िम इस हवश्व में लक्ष्मी िी के सवथश्रेष्ठ मोक्षदायी रूप का हविार करेंगे। माता िी अपने लक्ष्मी-स्वरूप में मुख्य रूप से रािगुणी िैं; क्ोंहक रिस् से िी हक्रयािीलता िालू रिती िै। गहतिीलता की प्रहक्रया िारा िी िीवन का सातत्य बनाये रखा िा सकता िै। इसी से माता िी रािगुण का अंि भी रखती िैं; परनुतु माता िी की अन्तरतम गिराई में हवशुद्ध सत्त्व का भण्डार भरा पड़ा िै, क्ोंहक हवषुणु सत्त्वगुण-प्रधान िैं, सत्त्व के अंि िैं और अन्ततः माता िी को अपने तृतीय स्वरूप, सरस्वती में हवलीन िोना िै। िम िब लक्ष्मी तथा सरस्वती के प्रकि स्वरूप के मध्य की सीमा-रेखा पर पहुँिते िैं, तब माता लक्ष्मी मोक्षलक्ष्मी-स्वरूप में प्रकि िोती िैं।

हिस साधना िारा िम मोक्ष प्राप्त करते िैं, वि माता िी का मोक्षलक्ष्मी-स्वरूप िै। साधक के िीवन में माता िी इसी स्वरूप में प्रकि िोती िैं। गीता िी के सोलिवें अध्याय में कहतपय मुख्य सद्गुणों ंका वणथन िै। इन सद्गुणों ंके रूप में माता िी व्यि िोती िैं। अभीरुता, हित्तिुक्तद्ध, ज्ञान और योग में हनष्ठा, दान, दम, यज्ञ, स्वाध्याय, तप, सरलता, अहिंसा, सत्य, अक्रोध, त्याग, िाक्तन्त, अहपिुनता, प्राहणमात्र पर दया, अलोलुपता, मृदुता, लिा तथा अिंिलता-इन स्वरूपों ंमें माता िी प्रकि िोती िैं। यिाँ दो अतीव रोिक बातें ध्यान में रखनी िैं। अहवद्या माया के रूप में िािाँ लक्ष्मी िी सम्पहत्त के रूप में प्रकि िोती िैं, विीं ंउसके आनु ंहगक स्वरूप धन-लोभ, दम्भ, दपथ, धन-संग्रि की वृहत्त तथा धन के अहभमान-रूप में भी प्रकि िोती िै। भगवान् श्री कृष्ण आध्याक्तत्मक मागथ की दैवी सम्पद् का बहुत अथथपूणथ वणथन करते िैं। उसमें अहवद्या माया के प्रकि स्वरूपों ंके साक्षात् हवरोधी स्वरूपों ं का वणथन िै। इसी कारण गीता के सोलिवें अध्याय के हितीय श्लोक में अलोलुपता तथा अिंिलता का वणथन पाया िाता िै। साधक के हृदय में इन िौबीस प्रकार के दैवी सम्पद् के रूपों ंमें लक्ष्मी माँ हनवास करती िैं।

साधक के हृदय में िम तथा दम-ये दो सद्गुण प्रकि िोते िैं। मन की िंिलता की हवरोधी क्तथथरता तथा सम्पहत्त के पररणाम स्वरूप उत्पन्न िोने वाली स्वाथथ-वृहत्त की हवरोधी हनःस्वाथथ-वृहत्त का भी उद्भव िोता िै। साधक के हृदय में आज्ञाकाररता के मित्त्वपूणथ स्वरूप में माता िी स्वयं प्रकि िोती िैं, क्ोंहक स्वयं माता िी मिाहवषुणु की आज्ञाकाररता की साकार रूप िैं। हिस भाँहत माँ पाहतव्रत्य तथा अपने स्वामी भगवान् हवषुणु की सेवा में समूपूणथ समपथण की सवथश्रेष्ठ प्रतीक रूप मानी िाती िैं, उसी प्रकार माता िी साधक के हृदय में स्वयं सुफुररत गुरु-भक्ति के रूप में प्रकि िोती िैं। गुरु-भक्ति के साथ–ि-साथ अनन्य भाव से सवथस्व समपथण कर हनःस्वाथथ भाव से सेवा करने की भावना भी साधक के हृदय में आहवभूथत िोती िै।

माता िी साधक के व्यक्तित्व में तीव्र हनरीक्षण–िक्ति, सावधानी तथा िागरूकता के स्वरूप में प्रकि िोती िैं। योग-मागथ में हविरण के हलए इन सद्गुणों ंका िोना अत्यन्त मित्त्व का िै। साधक को प्रमादी निीं ंिोना िाहिए। हिनसे अमूल्य हिक्षाएँ प्राप्त िोती िों, ं उन मित्त्वपूणथ वसुतुओं ंको हवसूमृत निीं ंकरना िाहिए। िीवन की इस मिान् पाठिाला में केवल अनुभव िारा िी हिक्षा हमलने से तीव्र हनरीक्षण-वृहत्त साधक के हलए बहुत उपयोगी मानी िाती िै। यहद साधक हनरीक्षण िारा अनुभवों ंसे ऐसा ज्ञान प्राप्त करने से िूक िाता िै, तो लक्ष्मी देवी के इस मित्वपूणथ स्वरूप का उसे भान निीं ंिोता।

अनिुासन : साधक को आध्यात्त्मक अनिुासनों ंका पालन करना िाहिए। यि िुभ लक्षण िै। हिस भााँहत माता िी अपने िक्ति-स्वरूप से िमें दृढ़ता तथा मनोबल का आवश्यक सद्‌गुण प्रदान करती िैं, उसी भााँहत आत्म-संयम तथा दृढ़ मनोबल से संरक्षक-स्वरूप अनिुासन प्रकि िोता िै। साधना अनिुासनपूवथक अथाथत् हनयहमत, अखण्ड और हनरन्तर करने से िी फलदायी िोती िै। अतिः साधक के हृदय में लक्ष्मी देवी अपने हवष्ुणु िक्ति स्वरूप में आध्यात्त्मक साधना में सातत्य तथा हनयहमतता, इन दो सद्‌गुणों ंिारा व्यि िोती िैं, क्ोंहक साधक का योगाभ्यास इन दो सद्‌गुणों ंपर हनभथर करता िै।

लक्ष्मी िी धैयथ तथा संलग्नता-इन दो दैवी सम्पद् के स्वरूपों ंिारा प्रकि िोती िैं। इनके अहतररि िमारे हृदय में उद्‌भूत हनष्कामता तथा आत्म-सन्तो भी लक्ष्मी देवी के व्यि स्वरूप िैं।

हिस प्रकार गृि-क्षेत्र में बाह्य स्वच्छता आवश्यक िै, उसी प्रकार आध्यात्त्मक क्षेत्र में िीिो का थथान िै। साधक के बाह्य तथा आन्तर िीवन के सभी ओर िुहिता साक्षात माता लक्ष्मी का थव्रूप िै ।

स्वास्थ्य तथा मुहदता, ये दोनों ंिी देवी के प्रकि स्वरूप िैं।

माता िी की अविेलना न करें

इसी भााँहत अब तक गृि-क्षेत्र में तथा योग और साधना के िीवन-क्षेत्र में माता िी के स्वरूपों ंके आहवभाथव का वणथन तथा उसकी आलोिना की गयी। माता िी की हदव्य िक्ति के प्राकट्य के मित्त्वपूणथ हनयम को ध्यान में रखना आवश्यक िै। ििााँ मााँ लक्ष्मी िी की आराधना की िाती िै, ििााँ उन्ें प्रसन्न हकया िाता िै, विीं ंपर वि हनवास करती िैं। ििााँ उनका अनादर िोता िै, विााँ वि हनवास निीं ंकरती िैं। इस बात को गृि-क्षेत्र अथवा साधना–िीवन में सब लोगों ंको ध्यान में रखना िाहिए। इतना िान लेने पर व्यक्ति को बहुत सावधान रिना िाहिए तथा माता िी की उपेक्षा करने से दूर रिना िाहिए। हिस समय लक्ष्मी मााँ के ये स्वरूप हवद्यमान िों,ं उस समय यहद िम उनका सदुपयोग न करें, यहद िम उनकी उपेक्षा करें, तो यि देवी का हतरस्कार करना िोगा। वि िैसी अपेक्षा रखती िैं, वैसा सम्मान उन्ें न दे कर िम उनका अपमान करते िैं, उनकी उपेक्षा करते िैं। अतिः यहद व्यक्ति लक्ष्मी की अविेलना करता िै , उनका अनादर करता िै , तो भौहतक तथा आध्यात्त्मक सुख-सम्पहत्त उसका त्याग कर िाते िैं।

इस मित्त्वपूणथ हनयम को समझ कर माता िी की, उनके हकसी स्वरूप की अविेलना न करने के हलए िमें सदा सावधान रिना िाहिए। इसी से अपने हिन्दू-घरों ंमें ऐसी मान्यता िै हक िब िम भोिन के हलए बैठे िों,ं उस समय िमें क्रोध निीं ंकरना िाहिए। भोिन करते समय ककथि िि निीं ंबोलना िाहिए। भोिन को अस्वीकार करना गम्भीर भूल िै। यि पृथ्वी पर िीवन बनाये रखने वाले पो क तत्त्व-रूप में हवद्यमान माता िी का अपमान िै, उनकी अविेलना िै। भोिन का अपमान न करें। उसकी उपेक्षा न करें। अतएव हिस हिन्दू-पररवार में यि सत्य समझ में आ गया, विााँ गृिलक्ष्मी कभी भी भूहम पर िावल हबखरने निीं ंदेगी; क्ोंहक िावल के ऊपर पााँव रखना मिादो िै। अन्न लक्ष्मी िै। व्यक्ति को अन्न अकारण निीं ंफेंकना िाहिए। उसका दुरुपयोग निीं ं करना िाहिए। इस प्रकार अन्न फेंकने से िम लक्ष्मी देवी के इस स्वरूप की मित्ता तथा अथिता निीं ंसमझ सके िैं, ऐसा मानना िोगा। हनश्चय िी िम अन्नदान करें-गाय, कुत्ता, हबिी तथा अन्य भूखे प्राहणयों ंको त्तखलायें; परन्तु उसे हनरथथक न फेंकें, क्ोंहक माता िी स्वयं कृपा कर िब िमारे पास आती िैं, उस समय यहद िम उनका मूल्य निीं ं समझते तो ऐसा भी िोता िै हक िब िमें उनकी अतीव आवश्यकता िोती िै, तब वि अलभ्य बन िाती िैं।

साधक में लक्ष्मी िी के प्राकट्य का एक और मित्त्वपूणथ स्वरूप ि◌ै स्मरण- िक्ति। 'या देवी सवथभूते ◌ु सूमृहतरूपेण संक्तथथता ।' अतिः आध्याक्तत्मक साधक को माता िी के इस स्वरूप को हवकहसत करने का सदा प्रयास करना ािहिए। देवीसू का कथन ि◌ै हक माता िी सभी प्राहणयों ◌ं में सूमृहत-रूप में हवरिाती ि◌ैं। गुरुदेव के श्रीमुख से हनकले उपदिे के अमूल्य तथा उतूकृि ि◌ों ◌ं की, ज्ञान की सूमृहत तथा इस लोक के मिान् सन्तों ◌ं तथा भिों ◌ं के िीविन के उदािरण से तथा उनके विनों ◌ं से प्राप्त ज्ञान की सूमृहत रूप में माता िी व्यि िोती ि◌ैं। आध्याक्तत्मक उपदिे के ये रत्न सूमृहत िारा िी सुरहक्षत रखे िाते ि◌ैं। यहद िम उन्ें अपने सूमृहत-पिल पर स्मरण न रखें, उनका मनन तथा हनहदध्यासन न करें, तो िम उन उपदिों ◌ं से पूणथतम लाभ निीं ◌ं उठा सकेंगे। यहद माता िी का यि सूमृत्यात्मक स्वरूप िमारे पास न िो, तो िम गुरुदेव के उपदिों ◌ं तथा उनकी आज्ञाओं ◌ं का सन्तो िनक रूप से पालन निीं ◌ं कर सकते। अतिः िमें लक्ष्मी देवी के इस मित्त्वपूणथ स्वरूप की अविेलना निीं ◌ं करनी िाहिए। 'मुझे स्मरण निीं ◌ं ि◌ै' -इस बिाने से उनकी उपेक्षा निीं ◌ं करनी िाहिए। यहद िम गुरुदेव के उपदिों ◌ं को स्मरण निीं ◌ं रखते, तो अन्त में िमें िी िाहन उठानी पिेगी।

अतिः िम लक्ष्मी माँ से प्राथथना करें हक वि िमारे गृि तथा हृदय में हवद्या माया के इन दैवी सम्पद् रूपों ◌ं में प्रकि िों ◌ं और आिीवाथद दें। अपने गृि तथा हृदय में हवरािमान माता िी के इन स्वरूपों ◌ं का िम पूणथ सदुपयोग करें और इस भाँहत भावपूवथक उनका आदर कर पूिन करें। िम उनसे प्राथथना करें हक िमें इस लोक तथा परलोक में अनन्त कल्याण-लाभ िो।

हदव्य गुरुदेव के पावन िरण-कमलों ◌ं की िरण लेने का सद्भाग्य हिन हिष्यों ◌ं और साधकों ◌ं को इस िीवन में प्राप्त हुआ ि◌ै, उनसे मैं कुछ हवि ि िि किना िािता हाँ। पहवत्र आनन्द-कुिीर में िैसा िीवन-यापन हकया िाता ि◌ै, वैसा हदव्य तथा उदात्त िीवन िीने तथा श्री गुरुदेव के उपदिानुसार अपना िीवन ढालने के हलए िो साधक प्रयत्निील ि◌ैं, उनके हलए मैं ये दो िि किता हाँ। इस थथान में माता लक्ष्मी के समूपूणथ प्रकाि तथा समूपूणथ महिमा के सवाथहधक हवरल स्वरूप का दिथन हमलता ि◌ै। दैवी सम्पद् के सब लक्षण िािाँ प्रिुर मात्रा में सदा हनवास करते ि◌ैं, ऐसे अनुपम आश्रम के रूप में, ऐसी अहितीय संथथा के रूप में वि यिाँ हवरािती ि◌ैं। यि आश्रम एक अहितीय भाग्यिाली तथा मंगलमय थथान ि◌ै। िमें यिाँ अत्यन्त दुलथभ मानव-दिे हमलने के पश्चात् मुमुकुषुत्व का अद्भुत सौभाग्य प्राप्त कर आत्मसाक्षात्कार-प्राप्त मिान् सन्त का सतत साहन्नध्य-रूपी अनमोल लाभ प्राप्य ि◌ै। यिाँ पर िमारी साधना के हवहवध पिलू परररहक्षत रिते ि◌ैं और उन्ें हदन-प्रहत-हदन हवकहसत करने के हलए प्रत्येक प्रकार की सिायता प्रदान की िाती ि◌ै।

भिों ◌ं के हलए मक्तन्दर ि◌ैं, ििाँ उपासना करने का प्रिुर अवसर उपलब्ध ि◌ै। नामि–प तथा संकीतथन के हलए भिन–िाल ि◌ै, श्रवण-स्मरण आहद नवधा भक्ति के हलए पूणथ सुहवधाएँ ि◌ैं तथा मक्तन्दर के आदिथ वातावरण में अथवा वन में, गंगा के पावन ति पर िप करने की सभी वसुतुएँ उपलब्ध ि◌ैं।

वेदाक्तन्तयों ◌ं के हलए उपहन द् पर हनत्य उतूकृि प्रविन सुनने, श्री स्वामी कृष्णानन्द िी िैसे प्रकाण्ड वेदान्ती के साथ सत्संग करने तथा वन-प्रदिे के एकान्त वातावरण में गम्भीर ध्यान करने के अनेक अवसर सुलभ ि◌ैं।

कमथयोगी के हलए भी ऐसी िी सुहवधाएँ ि◌ैं। यहद उसे अपने िीवन को साधना में रूपान्तररत करने की, अपने िीवन के अध्यात्मीकरण की सिी लगन ि◌ै, तो उसके हलए यि थथान साक्षात् स्वगथ ि◌ै।

हदव्य गुणों ◌ं के हवकास करने तथा आसन और प्राणायाम की प्रहक्रयाओं ◌ं का अभ्यास करने के हलए यिाँ िियोहगयों ◌ं के हलए भी श्रेष्ठ सुहवधाएँ ि◌ैं।

संक्षेप में किं तो संसूकृत के पक्तण्डत हिसे 'न भूतो न भहवष्यहत' किते िैं, ऐसा िी यि थथान िै।

हिस साधना िारा सविो ध्येय की प्राक्तप्त िोती िै, िो ध्येय मानव िीवन का अक्तन्तम लक्ष्य िै, ििाँ पहुँि कर परम सुख प्राप्त िोता िै, उस ध्येय की प्राक्तप्त के हलए प्रत्येक प्रकार की साधना की सभी प्रकार की सुहवधाएँ सुलभ िों, ऐसा हवलक्षण थथान हमलना दुलथभ िै। माता लक्ष्मी िी ने स्वयं गौरवमयी रीहत से तथा अबाध कृपा कर इस थथान को अपने प्राकट्य का स्वरूप बनाया िै। यिाँ गंगा माँ, हिमालय, गुरुदेव, गोहवन्द की आराधना- ये साधन प्रत्यक्ष वतथमान िैं। माता लक्ष्मी िी के इस साक्षात् स्वरूप का लाभ उठा कर िम उनका (माता लक्ष्मी का) सम्मान करें, उनकी आराधना करें तथा परम कृपालु परमेश्वर की अितुक कृपा से प्राप्त इस अनुपम सुयोग का उपयोग करें-इतना िी करना अब िमारे हलए िे रि िै।

कुछ समय पूवथ मैंने आप सबका ध्यान आकह थत हकया था हक हिस प्रकार माता िी ने इन रूपों ंमें प्रकि िो कर िमें हदव्य आिीवाथद प्रदान हकया िै, तो िम उनका अनादर करने की भूल न कर बैठें; क्योंहक िम यहद उनकी उपेक्षा करेंगे, तो यि दुलथभ सुयोग िमारे िाथ से हनकल िायेगा। िीवन अहनहश्चत िै तथा समय तीव्र वेग से भाग रि िै। ऐसे आदिथ वातावरण में मानव–िीवन लाभ का अद्भुत सौभाग्य क्षण मात्र में हछन िायेगा। यहद इसे स्मरण न रखें और देर तक उपेक्षा करते रिें, तो बाद में िमें पश्चात्ताप करना पड़ेगा और इससे िमें अपूरणीय क्षहत उठानी पड़ेगी। यहद माता िी िारा एक बार प्रदत्त इस अमूल्य सुयोग का िम अनादर करेंगे, तो माँ सरलता से पुनिः निीं ंआयेंगी और ऐसा अवसर पुनिः िमें दुष्प्राप्य िोगा। िब तक उनकी कृपा-सररता प्रबल वेग से प्रवाहित िो रिी िै, तब तक िम सावधान तथा िागरूक रि कर अपनी सत्ता को उस कृपा से आपूररत करने को तत्पर िो िायें तथा धैयथ और संलग्नता से अपनी आध्याक्तत्मक साधना में लगे रि कर माता लक्ष्मी िी की कृपा तथा सद्गुरुदेव के हदव्य िरण-कमल का आिीवाथद प्राप्त कर अपनी इिलौहकक िीवन-यात्रा िीघ्र पूणथ कर हनत्य प्रकाि, िाश्वत आनन्द, अमरव तथा दैवी पूणथता के परम धाम में पहुँि िायें।

डवद्यास्समस्तास्तव देडव भेदाः
क्तस्त्रय: समस्ताः सकला जगत्सु ।
त्वयैकया पूररतमम्बयैतत्
का ते सुतुडतः स्तव्यपरा परोक्तक्तः ।।
(दुगाथसप्तिती ११-६)

िे देवी! हवद्याएँ सारी भेद आपका किलाती।
िग की स्त्री मात्र सभी प्रहतहबम्ब आपका दिाथती ।।
िे अम्बे! यि िग पूररत िै सारा आपकी महिमा से।
मैं क्या सुतुहत करूँ, परे िो, पर सुतुहत की गररमा से ।।

सप्तम राहत्र

ॐ ऐं ंसरस्वत्यै नमिः

सृहि माता की वीणा का संगीत

या कुने्देन्दुतुषारिारधवला या ि्ुभ्रवस्त्रावृता
या वीणावरदण्डमक्तण्डतकरा या श्वेेतपद्मासना।
या ब्रह्माचुयुतिंकरप्रभृडतडभदेवैः सदा वक्तन्दता
सा मां पातु सरस्वती भगवती डनःेषिजाड्यापिा ।।'

धवल तु ार कुन्द िन्दा-सा िार ि्ुभ्र वस्त्रों ंवाली।
ीि कर में वीणा वर धारे श्वेेत पद्म आसन वाली ॥
ीि ब्रह्मा हिव हवषुणु सदृि देवों ंसे हनत वक्तन्दत िैं माँ।
बुक्तद्ध की िीिता िर, वि िी रक्षा करें सरस्वती माँ ।।

सृहि की उत्पहत्त, क्तथथहत तथा लय की आधारभूता ब्रह्ममयी महिमाक्तिता माँ को िमारा भक्तिपूणथ प्रणाम! ज्ञानदाहयनी, समस्त प्रपंिकी रिहयत्री व ध्ंवसकाररणी तथा समूपूणथ ज्ञान की पूणथता और िरम पररणहतरूपा माँ को बार-बार प्रणाम! उनकी कृपा िम सब पर िो!

आि िम सब परमात्मा की परािक्ति मिासरस्वती की पूिा िेतु भक्तिपूणथ हृदय से यिाँ आये िैं। मिासरस्वती िुद्ध िि-रूप में अहत-प्राकृत आहवभाथव िैं। मिासरस्वती सृहि के क्रहमक हवकास की, िीव तथा उसके प्रपंिकी उत्पहत्त से लय पयथन्त समस्त हक्रया की पूणथ मूहतथ िैं। विी ब्रह्माि्ति के रूप में िमािक्ति िैं और सृहि-हक्रया के आरम्भ से कायथ करती िैं। माता िी मन तथा इक्तियों ंसे अगम्य एवं नाम-रूप-रहित िो परम तत्त्व िै, उसमें से प्रकि िोने वाले समस्त नाम-रूपों ंके प्राकट्य तथा प्रक्ेषेपण की अहधष्ठात्री िैं। इस क्तथथहत में वि समस्त िीवन-प्रहक्रया के मूल में रिती िैं। उस अखण्ड एकरस सक्तिदानन्द परब्रह्म से सृहि-धारा प्रवाहित िो कर क्रमििः थथूल से थथूलतर रूप में अवतररत िो कोहि-कोहि नाम-रूपों ंके पररणाम को प्राप्त िोती िै और मिामाया के साम्राज्य में भ्रामक हवश्व-नािक के रूप में प्रकि िोती िैं। उस समय माता सरस्वती यवहनका के पीछे िली िाती िैं और इस नािक को आगे िलाने के हलए अपने अन्य दो स्वरूपों-हवषुणुमाया तथा दुगाथ देवी के िाथों ंमें छोड़ देती िैं। परन्तु िब परब्रह्म की कृपा से िीव के प्रत्यावतथन की प्रहक्रया आरम्भ िोती िै, तब हवकासि्क्र की प्रहक्रया की पूणाथहुहत प्रारम्भ िोती िै। िीव पुनिः आन्तररक योग-मागथ से ऊपर िढ़ना आरम्भ करता िै तथा अन्दर वतथमान िेतन तत्त्व की थथूलता को क्रहमक रूप से िििाता हुआ वि सत्त्व, दैवी सम्पद् तथा आध्याक्तत्मकता के पथ में आगे बढ़ते-बढ़ते योग के सवोत्कृि हिखर तक पहुँििाता िै। इस समय माता िी िीव में मिासरस्वती रूप में, उसकी अन्तश्ेचेतना में आत्मज्ञान अथवा ब्रह्मज्ञान रूप में प्रकि िोती िैं। इस भाँहत माता िी िीव के हववतथन-ि्क्र को िे करती िैं तथा िीवात्मा एक बार पुनिः परब्रह्म में हवलय िोता िै। इस प्रकार माता सरस्वती सिथन-ि्ति के रूप में नाम-रूप-रहित परब्रह्म से िोने वाली इस हवकास-प्रहक्रया के मूल में िैं। एक से अनेक की सृहि करने वाली माता िी परम ज्ञानदाहयनी रूप में अक्तन्तम समय हविुद्ध ज्ञान-स्वरूप में प्रकि िोती िैं। वि इस संसारि्क्र का आवतथन पूणथ करती िैं। इसी से िम उनमें इस संसार-सृहि की क्रीड़ा की पूणथता देखते िैं। माता िी की इन उभय स्वरूपों ंमें पूिा की िाती िै। साधक, भि तथा योगी के हलए माता िी का यि स्वरूप बहुत िी मित्त्व का िै; क्ोंहक उसे कैवल्य मोक्षप्रदायक ज्ञान माता सरस्वती िी प्रदान करती िैं।

योग के तत्त्व तथा उसकी हक्रया

िम माता िी की िो मूहतथ देखते िैं, उससे िमें सरस्वती माता की दो परमिो हक्रयाओं ंका हविार आता िै। उनके एक िाथ में वीणा िै, हिसका हविार िम अभी करेंगे और उनके अपर िाथों ंमें सुन्दर स्फहिक माला तथा वेद-ग्रन्थ िैं। उनके िाथ में पुस्तक िै। पुस्तक तथा माला िाथ में ग्रिण करने का भाव यि िै हक परा तथा

अपरा तत्त्व का समस्त ज्ञान उनके करतलगत िै। सृहि के समूपूणथ पदाथों का पूणथ ज्ञान तथा समूपूणथ सृहि के आहद-रूप परब्रह्म के परा ज्ञान का हिनमें हवसूतृत वणथन िै, उन सब वेदों ंको वि अपने िाथ में रखती िैं; क्ोंहंक वेद हिसमें से प्रथम प्रकि हुए उस ब्रह्मा की वि हक्रयाि–क्ति िैं। ब्रह्मा वेद-हपता तथा वेद-दाता िैं। माता सरस्वती स्वयं ब्रह्मा की, ितुमुथख ब्रह्मा की िक्ति िैं। ब्रह्मा वैहदक ज्ञान के प्रहतहनहध तथा परम, मूल भण्डार रूप िैं तथा माँ सरस्वती वैहदक ज्ञान की प्रकि स्वरूप िैं। इसी से माता िी ब्रह्मज्ञान के तत्त्वों ंको समाहवि करने वाले वेद-ग्रन्थ को अपने िाथ में धारण हकये िैं। आत्म-साक्षात्कार के पथ में वेद-ग्रन्थों ंके पाठ तथा गुरु के श्रीमुख से प्राप्त सत्य के हसद्धान्तों ंके ज्ञान को अभ्यास तथा हनहदध्यासन िारा स्वानुभूहत में रूपान्तररत करना िोता िै। यि योगाभ्यास हिसके िारा वेद का सत्य उपलब्ध िोता िै, उसका प्रतीक माँ के दाहिने िाथ की िुद्ध स्फहिक माला िै। माला योगाभ्यास के कायाथियन की सूिक िै। वेद की ज्ञानि–क्ति एवं योग तथा आध्याक्तत्मक साधना की हक्रयाि–क्ति-ये दोनों ंहमल कर माँ का पूणथ रूप िैं।

माँ हविुद्ध सत्त्व िैं

माता िी का हित्रण िुभ्र हविुद्ध वसन से पररवेहित एवं हनष्कलंक हनदो सौन्दयथ की पराकाष्ठा के रूप में हकया गया िै। माता िी की धवलता की कुन्द-पुष्प, िििमा तथा हिमालय की हिर अनहधगम्य तु ार-माला के हनष्कलंक सौन्दयथ से तुलना की गयी िै-"या कुन्देन्दुतु ाररिधवला।" कुन्द का अथथ िै कुमुहदनी, इन्दु ििमा को किते िैं तथा तु ारिर का अथथ िै-हिम-शृंखला। हवश्व की इन तीन सवोतृकृि, हनमथल तथा धवल वसुतुओं ंसे उनकी समता की िाती िै। वि हविुद्ध श्वेत वस्त्र से पररहित िैं, ऐसा वणथन यि बतलाने के हलए हकया गया िै हक माता िी अनून हविुद्ध सत्त्व की घनीभूत रूप िैं; क्ोंहंक वि परब्रह्म का प्रथम आहवभाथव िैं।

माता सवथरूप िैं

मि िानते िैं हक वेद के अनुसार अव्यि हनराकार हनगुथण परब्रह्म के हृदय में से सवथप्रथम प्रणव का प्राकट्य हुआ। अज्ञेय तुरीय सत्ता के प्रथम िुद्ध संकल् के समय िो प्रथम स्पन्दन अथवा अलौहकक कम्पन हुआ, उसे वेद 'एकोऽिं बहुस्याम् प्रियेय' - 'मैं एक हाँ अनेक बनूँ', ऐसा कि कर वणथन करते िैं। इस लाक्षहणक कथन का कारण यि िै हक िो एक था, वि दृश्य रूप से अनेक हकस प्रकार बना, इसे िम समझ सकें। उसका प्रथम िुद्ध संकल् इस प्रकार स्पन्द-रूप से आहवभूथत िो प्रथम तथा आद्य व अतीक्तिय िि अथवा नाद-रूप से व्यि हुआ। इसे िी िम सब प्रणव-रूप में िानते िैं। यि नाद ब्रह्म अथवा प्रणव माता सरस्वती का िी रूप िै। माँ सरस्वती प्रणवरूहपणी िैं। माँ सरस्वती में नाद-ब्रह्म तथा िि-ब्रह्म, ये दो स्वरूप समाहित िैं। नाद प्रणव िै और िि उसकी मूल ध्वहन का स्वरूप िै। यि प्रणव िब व्यि तथा उिररत िोता िै, तब वि वाणी के क्षेत्र में प्रकि िोता िै। प्रथम िि वाणी बनता िै। इसी से माता िी वीणा तथा वाणी किी िाती िैं। उनके िाथ में इस हविुद्ध िि को प्रकि करने का यन्त्र वीणा िै एवं वि सब उिररत नामों ंकी िननी िैं। अतिः इस रूप में वि 'वाणी' िैं। इस वीणा की ध्वहन के मध्य में िी समूपूणथ वेद-मन्त्रों ंकी उत्पहत्त का थथान िै। इस हव य में अहधक गम्भीरता से उतरने पर िम पाते िैं हक यि अक्तखल हवश्व परमा माँ की वीणा की झनकार िी िै, इसके अहतररि वि अन्य कुछ भी निीं ंिै। यि समूपूणथ िगत्, यि समस्त सृहि माँ सरस्वती की वीणा से हनिःसृत सनातन संगीत के स्वरूप के अहतररि अन्य कुछ भी निीं ंिै; क्ोंहंक िम िानते िैं हक यि दृश्य िगत् रूप अथवा आकार से हनहमथत िै। िो कुछ भी िम इक्तियों ंिारा देखते, स्पिथ करते अथवा अनुभव करते िैं, वि सब रूप का िी स्वरूप िै। यि िगत् अपने रूप के िारा िी िमारे समुमुख प्रकि िोता िै और प्रत्येक रूप का एक हविे नाम िै। हवश्व में िो असंख्य रूप िैं, वे अपने असंख्य नामों ंिारा िी िमें बोधगम्य िोते िैं। ये नाम अमुक अक्षरों ंके संयोिन िैं। ये अक्षर िो असंख्य हभन्न-हभन्न नाम गहठत करते िैं, वे ध्वहन के उिररत रूप िैं। सुुहित ध्वहन अक्षर-रूप में प्रकि िोती िै

और ये रिस्यमय अक्षर संयोहित िो कर नाम का गठन करते िैं, हिसका अथथ रूप के आकार में प्रादुभूथत िोता िै। यिी दृश्य िगत् िै। प्रत्येक अक्षर हिस नाद का सुफुि स्वरूप िै, वि नाद अन्ततिः तात्क्त्त्वक रूप में हविुद्ध स्पन्दन िै और यि स्पन्दन माता िी की वीणा के संगीत से उत्पन्न िोता िै।

इस भाँहत सरस्वती की वीणा के हदव्य तारों ंकी झनकार के स्पन्दन से नाद प्रकि िोता िै। यि नाद िब प्रसुफुहित िोता िै, तब अमुक अक्षर बन कर नाम का हनमाथण करता िै और ये नाम अपना अथथ प्रकि करने वाले अगहणत रूपों ंमें व्यि िोते िैं, हिसे िगत् किते िैं। इसहलए यि समस्त दृश्यमान् िगत्, समूपूणथ ब्रह्माण्ड और यि ब्रह्माण्ड िी क्यों ंसवाथतीत सत्ता से उद्भूत तथा प्रत्येक क्षण उत्पन्न िो रि असंख्य संसार माता की वीणा के संगीत की बाह्य अहभव्यक्तियाँ िैं। इस संगीत की सूत्रधारर्–क्ति सरस्वती िी िैं। वि परम िुद्ध सत्त्व िैं तथा अक्तन्तम तत्त्व िैं, हिनके हिन्तन से िी िम िीघ्र िी िुद्ध तुरीय अवथथा में, परम सत्ता में पहुाँिाते िैं। िमारे हलए माता सरस्वती का यिी स्वरूप िै। उनकी वीणा ओंकाररूपा िै तथा यि हवश्व उनकी वीणा िारा व्यि िुद्ध हदव्य नाद के रूप में अहभव्यि उनकी िी िक्ति िै।

हिस हदव्य ज्योहत के प्रकाि से अन्धकार दूर िोता िै

सप्तिती में िम देखते िैं हक महि ासुर के हनधन के समय माँ रुि-रूप में उसके समक्ष प्रकि हुई थीं।ं यि हवलक्षण तथा समझने योग्य बात िै। िब मिासरस्वती-रूप में माँ समस्त प्रपंि के सृिन की मूल कारण िैं, तो रणभूहम में रुि-रूप में उनके आहवभाथव िोने का कारण क्या िै? िुद्ध सिथक िक्ति कभी ध्वंस हकस प्रकार कर सकती िै? हकन्तु यहद िम सृहि–क्र के दूसरे छोर पर व्यि िोने तथा िक्र के पूणथ िोने पर िुद्ध ब्रह्मज्ञान में पररणत िोने वाले माता िी के स्वरूप पर िरा हविार करें, तो यि िंका तुरन्त दूर िो िायेगी; क्योंहक माता िी वसुतुतिः हविाि निीं ंकरतीं,ं अहपतु हिस क्षण िीवात्मा उनके साहन्नध्य में िाता िै और हिस क्षण वि अपने उज्ज्वल आलोक से उद्भाहसत िो प्रकि िोती िैं, उसी समय उसके िन्म-मृतुयु-रूप िक्र की गहत समाप्त िो िाती िै। इसी से उनके प्राकट्य मात्र से संसार-रोग का अिु नाि िोता िै। उनके महिमामय आहवभाथव से मृतुयु भी मृतुयु को प्राप्त िोती िै और अज्ञानान्धकार समूल नि िो िाता िै। अतिः उन्िें वसुतुतिः हकसी का हविाि करना निीं ंपड़ता।

उनके आहवभाथव मात्र से अज्ञान-रूपी अन्धकार स्वयमेव नि िो िाता िै, संसारर्–क्र की गहत हनरुद्ध िो िाती िै। माता िी िीव में रि िीव के अक्तन्तम अविेष को भी सदा के हलए उत्पाहित कर िालती िैं। उस समय िुद्ध िैतन्य ब्रह्म के साथ िीव का अभेद िो िाता िै।

िीव के िैतन्य क्षेत्र में मिासरस्वती के रूप में माँ के आहवभाथव िोने मात्र से अज्ञानान्धकार का अहिर ध्वंस िोता िै, िीव नि िो िाता िै, मृतुयु की भी मृतुयु िो िाती िै तथा 'पुनरहप िननं पुनरहप मरणं' का प्रवाि समाप्त िो िाता िै। माँ के प्राकट्य से िीव पूणथ ब्रह्मज्ञान लाभ करता िै।

इस भाँहत माता िी की उपासना का बहुत िी सुन्दर लाक्षहणक अथथ िै। िमारी उपासना में आत्यक्तन्तक मोक्ष-प्रदाहयका िक्ति की िी आराधना िै, ऐसी बात निीं ंिै। यि युगपत् हवरािि् की भी उपासना िै; क्योंहक िम िब माँ की मिासरस्वती के रूप में उपासना करते िैं, तो िम अक्तखल हवश्व की उपासना करते िैं। िम देख िुके िैं हक समस्त िगत् और कुछ निीं ंिै। वि अपनी प्रथमावथथा में हदव्य नाद रूप में प्रकहित उनकी परािक्ति का आहवभाथव तथा साक्षात् स्वरूप िै। िम िो कुछ भी देखते िैं, वि सब माता सरस्वती की िक्ति का िी घनीभूत रूप िै। िम िो माँ की पूिा करते िैं, उसमें केवल परम पुरु के मातृ-स्वरूप की पूिा िै, ऐसा निीं ंिै। वि हवश्व-रूप भगवान् की पूिा िै। इसके साथ िी परािक्ति के उस स्वरूप की भी पूिा िोती िै, हिसकी कृपा से िी िम अज्ञान-रूपी अन्धकार के पंिे िंसे छुिकारा पाते िैं और अमरता, असीम ज्ञान तथा अनन्त आनन्द के परम धाम में पहुाँिते िैं।

डचडतरूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य क्तसर्ता जगत् ।
नमस्तसै्यै नमस्तसै्यै नमस्तसै्यै नमो नमः ।।'
(दुगाथसप्तिती : ५-८०)

कर पूरा िग व्याप्त िै क्तथथत िा िैतन्य स्वरूपा माँ।
नमस्कार िै नमस्कार िै नमस्कार िै उसे नमिः ॥

अष्टम राडत्र

ॐ प्राणो देवी सरस्वती विोहभवाथहिनीवती धीनामहवत्र्यवतु

हसक्तद्ध तथा सफलता की देवी

जय सरस्वडत जय सरस्वडत जय सरस्वडत पाडि माम्।
ि सिरस्वडत िि सरस्वडत िि सरस्वडत रि माम् ॥

ि प्राणों ंकी अहधष्ठातृ माँ सरस्वती किलाती।
इक्तिय का इक्तिय के िारा िि नेतृव िै करवाती ।।
और बुक्तद्ध की रक्षा, संरक्षण को माता करवाती ।
सबकी रक्षा करें विी माँ िो सरस्वती किलाती ॥

इस समूपूणथ िगत् की क्तथथहत तथा िै रूपा भगवती िननी ! तुम्हें नमस्कार। सवाथतीत सत्य की अहिन्त्य अहनवथिनीय िक्तिस्वरूपा ब्रह्मरूहपणी माँ को प्रणाम। िो िमाक्ति, आद्यिक्ति, परािक्ति सरस्वती स्वरूप में प्रकि िो, िमें परब्रह्म का परम ज्ञान प्रदान कर दुिःख और मृतुयु के माहयक िीवन से मुि करती िैं, ऐसी िगदम्बा को मेरा बार-बार प्रणाम।

समस्त दृश्य िगत्, प्रपंि तथा मानव-दृहि से परे अवक्तथथत अनन्त कोहि ब्रह्माण्ड-ये सब माँ सरस्वती के अलौहकक तथा भव्य प्रकि रूप िैं। विी बुक्तद्ध से अगम्य परब्रह्म की िक्ति की आद्य स्वरूप िैं। विी रिस्यमय नाद के रूप में सवथप्रथम प्रकि िोती िैं। इसी से वि नादरूहपणी सरस्वती के रूप में पूहित िैं। वि परम श्रेष्ठ प्रणवरूपा िैं, इसी से वि ििहपणी अथवा ििरूहपणी भी किलाती िैं। परब्रह्म ििूप िै। वि हनश्चल तथा हनक्तिय िै। उसमें हकसी प्रकार की गहत अथवा कम्पन निीं ंिै। वि हनस्पन्द िै। विाँ न तो ध्वहन िै, न हक्रया िै और न गहत िी िै। वि िि, हनस्पन्द तथा हनक्तिय िै।

इस अनन्त आनन्दघन का प्रथम स्पन्दन हबन्दु के रूप में क्ोंकर प्रकि हुआ, इसका वणथन वेदों ंमें हकया गया िै। ज्ञानघन के मध्य में उिलन से आहवभाथव िी यि अलौहकक हबन्दु िै, सभी वतथमान पदाथों का कारण िै। यि हबन्दु नाद-रूप में प्रकि िोता िै। असीम हिद्न में उत्पन्न हुआ आहद स्पन्दन हबन्दु-रूप में प्रकि िोता िै। उसका प्रकि नाद िै और विी माँ सरस्वती िैं। िम देख िुके िैं हक इसी से माता सरस्वती की कल्ना िुद्ध, हवमल, श्वेतवसना, अवणाथ तथा समूपूणथ नादि्क्ति की प्रहतमूहतथरूपा वीणाधाररणी के रूप में की गयी िै। आहद िनाद से िुद्ध ध्वहन के रूप में क्रमििः समूपूणथ वैखरी ििि-राहि की सृहि िोती िै। वैखरी िि िी वाक् िै। वाक् का प्रकिीकरण वणथ अथवा अक्षर-रूप में िोता िै। वणों के संयोिन से िि की उत्पहत्त िोती िै। िि िी नाम िै। नाम के साथ िी उसके अथथज्ञापक रूप का आहवभाथव िोता िै। िम इस दृश्य िगत् में िो कुछ भी देखते िैं, वि सब नामरूपात्मक िै। यि दृश्य िगत्, िो हक अनन्त रूप िै, माता सरस्वती अथवा आहद िि ब्रह्म का िी अक्तन्तम पररणाम िै, हिसका प्रथम ध्वहन-रूप में, तदनन्तर क्रमििः वाक्, वणथ तथा नाम और अन्त में आकार-रूप में आहवभाथव हुआ।

यि सृहि िो मनुष्य तथा पदाथथ के रूप में हवकहसत िै, उस आहद परम सत्य की िी हविे अहभव्यक्ति िै। आओ िम इस पर िी हविार करेंगे। हपछले हदनों ंमें िमने माँ का नाम-रूप की िक्तिमयी ध्वंसकाररणी दुगाथ देवी के रूप में तथा हत्रकाल में नाम-रूप की रक्षाकाररणी-पालनकती लक्ष्मी के रूप में पूिन हकया था। उस समय िमने उनके केवल मूल प्रापंहिक स्वरूप का िी वणथन निीं ंहकया था, अहपतु मनुष्य और उसके व्याविाररक िगत् के हक्रयाकलापों ंमें माता िी हकन-हकन स्वरूपों ंमें व्यि िोती िैं, इसका भी हनरूपण हकया था। इसके साथ िी िीव के पूणथता प्राक्तप्त के लक्ष्य तथा परब्रह्म से उसके हमलन के हलए व्यवहृत िोने वाले आन्तररक योग-मागथ में

सिाय्य करने के हलए माता ि‍ी साधक की आन्तर िेतना तथा व्यक्तिव में हकस प्रकार प्रकि िोती िैं, इसका भी मिने हविार हकया था।

बि िम इस हव यि–गत् में माता ि‍ी के स्वरूपों ंका हविार करते िैं, तो देखते िैं हक मनुष्य के व्यविार-गित् में हितना परिाक्ति का दुगाथ माता तथा लक्ष्मी माता के रूप में प्रकिीकरण हुआ प्रतीत िोता िै, उतना माता सरस्वती के रूप में प्राकट्य निीं ंअनुभव िोता। इसका एकमात्र कारण यि िै हक दृश्य िगत् में प्राकट्य तथा सृहि के मूल उद्गमथथान-रूपी स्रोत की ओर प्रत्यावतथन के हवकास-प्रहक्रया–क्र के उभय छोरों ंपर उनका अहधष्ठान माना गया िै। िम देख िुके िैं हक सिथन-प्रणोद के रूप में माता ि‍ी क्ा कायथ करती िैं। ब्रह्म का अव्यि िक्ति-तत्त्व िब हवश्व में प्रकि िोता िै, तब उसके ऊपर सरस्वती माँ का आहधपत्य माना िाता िै। इस भाँहत हवश्व-कायथ में माँ सरस्वती का कायथ प्राथहमक िै।

हवश्व की रिना कर माँ (सरस्वती) यवहनका के पीछे पाश्वथभूहम में िली िाती िैं। पदाथों के एक बार प्रकि िी िोने पर तथा िो अनामी था, उसके नाम-रूप धारण कर लेने पर वि (सरस्वती) प्रहतसरण कर िाती िैं और अगली प्रहक्रया को लक्ष्मी देवी तथा दुगाथ देवी के रूप में प्रकि अपने अन्य दो स्वरूपों ंको िस्तान्तररत कर देती िैं। इसी से िम माता ि‍ी के संरक्षक स्वरूप लक्ष्मी देवी से अहधक अवगत िैं। उनका कायथक्षेत्र दीघथ काल तक हवसूतृत िोने से िमें वि सतत प्रवतथमान प्रहक्रया-सा लगता िै। इसी से िक्ति के उस स्वरूप की क्रीिा के ऊपर िमारा ध्यान अहधक केक्तित िोता िै।

इसी भाँहत समस्त नाम-रूपों ंको हनहवथकार भाव से हवलय करने वाली दुगाथ माता ि‍ी की अक्तन्तम लीला के ऊपर भी िमारा ध्यान केक्तित िोना स्वाभाहवक िी िै। मनुष्य के मन तथा आन्तर िेतना में इन दोनों ंके प्रहत ममव िोने का एक बहुत िी सिि तथा बोधगम्य कारण िै और वि यि िै हक नाम तथा रूप के प्रहत, हवश्व की प्रत्येक वसुतु के प्रहत मनुष्य की ममता तथा तज्जन्य आसक्ति इतनी तीव्र िोती िै हक वि इन नाम-रूपों ंतथा वसुतुओं ंके पो ण में तथा उनका अक्तस्तव सदा बनाये रखने के प्रयत्न में मग्न रिता िै। इससे िब उन नाम-रूपों ंतथा वसुतुओं ंका हवनाि िोता िै, तब वि स्तब्ध-सा रि िाता िै, उसे गिरा आघात पहुँिता िै। ममता के पररणाम-स्वरूप दृढ़ बनी आसक्ति के कारण व्यक्ति हवनाि अथवा मृतुयु की बात पसन्द निीं ंकरता। उसके हृदय में दुिःख िोता िै। इसके पररणाम-स्वरूप उसके मन में इस हवनाि-प्रहक्रया का आतंक छाया रिता िै। उसके मन में इस बात की सूमृहत सतत बनी रिती िै और उसे इससे भय लगता िै। अतिः यि हविार उसके मन को घेरे रिता िै। हिन वसुतुओं ंको वि 'मेरी' समझता िै, उनमें उसका ममव िोता िै। उन वसुतुओं ंकी सुरक्षा के हलए वि माता लक्ष्मी के कायथ में सियता करता िै। परनुतु सरस्वती देवी में से िोने वाला सिथन अथवा सृहि का प्राकट्य उसे सिि लगता िै और एक बार प्रकि िो गया, तो मनुष्य का ध्यान उस ओर निीं ंिाता। यिी कारण िै हक व्यक्ति को सरस्वती-तत्त्व के रूप में माता की हवद्यमानता प्रत्यक्ष अनुभव निीं ंिोती। परनुतु तकथ िारा भी यि िाना िा सकता िै हक माता ि‍ी के सरस्वती-स्वरूप का भी अक्तस्तव अपररिायथ-रूप में िै; क्ोंहक यहद सृहि न िो, तो अनुराग के हलए वसुतुओं ंका अक्तस्तव िी क्ोंकर िोता? इस भाँहत प्रत्येक वसुतु की स्वाभाहवकता देखते हुए प्रत्येक हवद्यमान वसुतु के अक्तस्तव के हलए सरस्वती माँ एक अपररिायथ तत्त्व िैं, इसे स्वीकार करना िी पिेगा।

सफलता का रिस्य

माँ सृहि-प्रहक्रया का केवल प्रविा िी निीं ंिैं; अहपतु उनका आहद भी िैं; क्ोंहक आहद से िी सृहि का प्रारम्भ िोता िै। इसी से हिन्दू-समाि में माँ की आरम्भ-रूप में भी पूिा की िाती िै। िो भी कायथ आरम्भ िोता िै, वि माता सरस्वती की कृपा से िी िोता िै, ऐसी मान्यता िै। यि एक हवहित्र-सी बात िै हक सभी आरम्भों ंकी अहधष्ठातृ देवी माँ सरस्वती के साथ–ी-साथ प्रत्येक श्रद्धालु हिन्दू ईश्वर के एक हविे स्वरूप का गणपहत के रूप

में पूिन करता िै। गणपहत भी आरम्भ का एक स्वरूप-नकारात्मक स्वरूप िै। गणपहत को भी बुक्तद्ध का प्रतीक माना िाता िै, िब हक माता सरस्वती बुक्तद्ध के हक्रयात्मक स्वरूप का प्रतीक मानी िाती िैं। सरस्वती के पूिन से गणपहत-पूिन अहधक लोकहप्रय िै िो हवघ्नों ंके हनवारणाथथ हकया िाता िै, िब हक माता सरस्वती के पूिन का केंद्रीय उद्देश्य सदा यि रिता िै हक वि सभी प्रारम्भ हकये हुए कायों को अपनी कृपा िारा सफलता प्रदान करें। आइए, अब हविार करें हक अपने इस स्वरूप में माता िी मानव-सृहि में हकस प्रकार प्रकि िोती िैं। उदािरण-स्वरूप परसों ंएक ऐसा प्रसंग आने वाला िै, िब माता िी की सवाथरम्भ की अहधष्ठातृ देवी के रूप में पूिा की िायेगी। पहवत्र परम्परा के अनुसार यि हवियादिमी का हदन हवद्यारम्भ के हलए हनधाथररत िै। कला अथवा हवज्ञान के अभ्यास के आरम्भ के हलए हवियादिमी को अतीव मांगहलक हदवस माना िाता िै। ऐसी मान्यता िै हक इस हदन आरम्भ हकया हुआ कायथ सफलतापूवथक पूणथ िोता िै। संगीत के समस्त वाद्यों ंका, रिनात्मक कला से सम्बक्तन्धत प्रत्येक वस्तु का तथा मानव के सामाहिक िीवन की इन सृिनात्मक प्रहक्रयाओं ंसे सम्बद्ध सभी पदाथों का इस हवियादिमी के हदन पूिन हकया िाता िै। िगत् के व्यि स्वरूप अक्षरों ंको ग्रन्थ-रूप में सुसक्तज्जत कर रूहढ़गत रीहत से नवमी के हदन पूिा की िाती िै और दिमी के हदन योग्य मुहतथ में इन ग्रन्थों ंको पूिा-गृि से बािर हनकाला िाता िै और हवद्यारम्भ हकया िाता िै।

यि सब मनुष्य की बाह्य प्रकृहत के ऊपर िोता िै। इसके साथ िी िम देखते िैं हक हवेि कर इस आश्रम में आध्याक्तत्मक िीवन का प्रारम्भ भी इस मांगहलक हदवस को दीक्षा से िी िोता िै। आप सब िानते िैं हक रिस्यमय नाद वाक् तथा वणथ का रूप धारण करता िै। िमारे मन्त्र इन वणों के गूढ़ संयोिन िैं। मन्त्र सरस्वती के थथान-सीहमत िक्ति के पुंिीभूत रूप िैं। इन मन्त्रों ंका िप सिे साधक को बीातीत ज्ञान प्रदान करता िै। सभी साधकों ंको सरस्वती के इस स्वरूप का ज्ञान 'मन्त्र-उपदेि' के रूप में हदया िाता िै। साधक के आन्तर आध्याक्तत्मक हवकास के प्रारम्भ का यि प्रथथान-हबन्दु भी िै। माता िी वैहदक ज्ञान के प्रतीक रूप में एक िाथ में पुस्तक धारण हकये िैं और उस ज्ञान के अिारण के हलए दूसरे िाथ में िुद्ध स्फहिक माला धारण हकये हुए िैं।

यहद िम इस ज्ञान के पररपे्रेक्ष्य में इस हवश्व में मानव िाहत के हविाल िीवन में माता सरस्वती के रूप में पररिक्ति की लीलाओं ंपर दृहिपात करें, तो िम देखेंगे हक इस हवश्व में िो भी सृहि-कायथ िल रिा िै, उसका मूल-तत्त्व माता सरस्वती िी िैं। इसी से अपने यिााँ तथा हवज्ञान में प्रगत पाश्चात्य देिों ंमें हकये िाने वाले िोध-कायथ, इन वैज्ञाहनक िोधों ंके पररणाम-स्वरूप हुए आहवष्कार, वैज्ञाहनक हनयमों ंके अिेषण से हकये गये अनुसन्धान तथा इन अनुसन्धानों ंका प्रयोग भगवती माता सरस्वती की िी लीलाएँ िैं। वैज्ञाहनक अनुसन्धान, आहवष्कार, अिेषण तथा ऐसे आहवष्कारों ंपर आधाररत हवहवध साहधत्रों ंका हनमाथण- ये सब माता सरस्वती के प्रकि स्वरूप िैं।

िम पिले कि िुके िैं हक माता िी सभी प्रारम्भों ंमें रिती िैं। अतः हदवस के िुभ प्रारम्भ में भी वि आध्याक्तत्मक हबन्दु-रूप में रिती िैं अथाथत् िब राहत्र के िार प्रिर समाप्त िो िाते िैं और राहत्र व्यतीत िो िाती िै तथा नवीन हदवस का िुभारम्भ िोता िै, उस समय पहवत्र ब्राह्ममुहतथ की िान्त गम्भीर वेला में माता अपने सवथश्रेष्ठ स्वरूप में पूणथ रूप से प्रकि िोती िैं। वि वेला ज्ञानदाहयनी माता सरस्वती की अध्यात्मकारी िक्ति से व्याप्त िोती ि। इसी कारण से नूतन व थ भी मंगलमय माना िाता िै। वि सरस्वती-रूपा हदव्य िक्ति की अध्यात्मकारी िक्ति से पररव्याप्त रिता िै। माता िी की भावमयी आराधना के साथ यहद कोई नया व्यवसाय उस हदन आरम्भ हकया िाये, तो वि अपनी पूणथ कृपा की वृहि कर उसमें सफलता प्रदान करती िैं। कोई भी नया अध्यवसाय अथवा नवीन संथथा की थथापना माता सरस्वती की कृपा से िी िक् बनता िै। यि भी माता सरस्वती के आहवभाथव का एक स्वरूप िै। हविेि कर यिााँ आनन्द-कुिीर में कोई िुभ कायथ प्रारम्भ करना िोता िै, तो सवथप्रथम माता की पूिा तथा उनके आिीवाथद की यािना की िाती िै। उदािरण-स्वरूप हनमाथण के हलए हकसी कायथ में नींवं खोदने, हिलारोपण करने के पूवथ माता सरस्वती की आराधना की िाती िै।

इसी भाँहत सभी व्यापार तथा व्यविार माता सरस्वती की पूिा तथा भक्तिभावपूणथ आराधना के रूप में करना िोता िै। ििाँ तक मुझे ज्ञात िै, दहक्षण भारत के सभी व्यापाररक केन्द्रों ंमें इस प्रथा का अिरण हकया िाता िै। मिािार में इस व्यापार के फल-स्वरूप उत्पन्न हुई लक्ष्मी के ऊपर िी सबका ध्यान केक्तित हदखायी
पिता िै। विाँ व्यापारी-वगथ के लोग सरस्वती की अपेक्षा सम्पहत्त की देवी लक्ष्मी के उपासक अहधक िैं। िम िो हकसी प्रकार से आराधना करें, अन्त में आराधना तो परब्रह्म की िी िोती िै। परन्तु िमें यि समझ लेना िाहिए हक
मनुष्य की सब प्रकार की प्रवृहत्तयाँ पराशक्ति के हवहवध स्वरूप की लीलाएँ, िी िैं—िािे वि लक्ष्मी-स्वरूप की, दुगाथ-स्वरूप की अथवा सरस्वती-स्वरूप की िों। इसे ध्यान में रख कर सभी प्रवृहत्तयों ंके प्रहत ऐसा दृहिकोण अपनायें तथा पराशक्ति माता की भक्ति-भाव से, उनकी पूिा की भावना से व्यविार की सभी हक्रयाओं ंका अिरण करें, तो िम अपने व्यविार–गत् के कायों का भी अपने आध्याक्तत्मक िीवन के हवकास के हलए उपयोग कर सकेंगे। यहद इतना हकया गया, तो सांसाररक मनुष्य को इस पररवाद का अवसर निीं ंआयेगा हक उसे पूिा, ध्यान तथा योग-साधना का समय अथवा अवसर निीं ंहमलता िै। िो व्यक्ति सभी प्रवृहत्तयों ंके आध्याक्तत्मक स्वरूप
तथा उनके पीछे पराशक्ति के सूत्रधार िाथों ंको देख निीं ंपाता िै, वि ऐसा पररवाद करता िै। इसी के कारण िी मनुष्य सोिता िै हक उससे आध्याक्तत्मक साधना निीं ंिो सकती और उसे आध्याक्तत्मक प्रकाि प्राप्त िोने की कोई िक्ता निीं ंिै। यि बहुत बिी भूल िै; क्ोंहक श्रद्धालु हिन्दू तथा भारतीय प्रहतभावान् व्यक्ति की ऐसी दृढ़ भावना िोती िै हक उसका समूपूणथ िीवन परमात्मा के प्राप्त्यथथ िै, आत्म-साक्षात्कार के हलए िै। श्रद्धालु हिन्दू के हलए िीवन का इतना िी मूल्य िै हक िीवन िीवात्मा को वररत हवकास कर मानव–िीवन के िरम लक्ष्य आत्म-साक्षात्कार िेतु प्राप्त एक सुअवसर िै। उसके हलए िीवन का इससे अहधक कोई मित्त्व निीं ंिै। अतः िमें ऐसा िीवन िीने का प्रयत्न करना िाहिए। हिन्दू के हलए कोई भी व्यविार लौहकक निीं ंिै। समस्त गहतयाँ भगवती माँ की हदव्य स्वरूप िैं और सभी प्रवृहत्तयाँ पराशक्ति की सतत पूिा-रूप िी िैं, ऐसा दृहिकोण रख कर िमें अपनी प्रवृहत्तयों ंके प्रहत अपने समस्त भाव बदलने िोंगे। िमें ऐसा निीं ंमानना िाहिए हक िम तो व्यविार में उलझे हुए िैं, पहतत िैं, आध्याक्तत्मक सत्य से बहुत दूर िैं। साधना के हलए अवसर के अभाव का खेद करते हुए िीवन व्यतीत निीं ंकरना िाहिए। इसके हवपरीत सभी कायथ आनन्द-भाव से करने िाहिए, उत्साि से, प्रफुक्तित तथा हवकहसत मन से करने िाहिए; क्ोंहक िमें यि िान लेना िाहिए हक िम िो कुछ भी करते िैं, वि मातृ-पूिा िी िै। इसी से िम िो कुछ भी करते िैं, उसे पूिा-भाव से करना िाहिए। िमें यि ज्ञात िोगा हक मनुष्य को अपना व्यवसाय अथवा थथान-पररवतथन करने की कुछ भी आवश्यकता निीं ंिै और न परम्परागत हनवृहत्त-मागथ के हलए आवश्यक एकाक्तन्तक िीवन-यापन िेतु अरण्य में पलायन करने की िी आवश्यकता िै। यहद ऐसा अवसर आये हक आप एकान्त तथा ध्यान में समय व्यतीत कर सकें, तो यि अतुत्युत्तम िै; हकन्तु यहद ऐसा सम्भव न िो सके, िैसा हक सामान्य मानव-समुदाय के िीवन में िोता िै, तो खेद करने का कोई कारण निीं ंिै; क्ोंहक यहद पदाथों के प्रहत एक बार यथोहित दृहि स्वीकार की गयी और उनके प्रहत सम्यक् भाव अपनाया गया, तो िम िो कुछ भी करते िैं वि अपरोक्ष रीहत से 'योग' तथा 'आध्याक्तत्मक साधना' िी िै। नवरात्र के नौ हदवस की माता िी की आराधना से यि सत्य सहविे स्पि िोता िै। िाथ काम करता िै, नेत्र देखते िैं, नाहसका सूँघती िै, कान सुनते िैं तथा हिह्वा बोलती िै- ये सभी हक्रयाएँ माता िी के गहतिील स्वरूप की पूिा िी िैं। इस बात की सूमृहत हदलाने के हलए िमारे प्रािीन ऋहषयों ंने भगवती माता की नवरात्र-पूिा का अपूवथ अवसर िमें प्रदान हकया िै। इसी से समस्त मानव–िाहत का, माता िी की सभी सन्तानों ंका मुख्य कतथव्य िै हक िीवन की सभी प्रवृहत्तयों ंमें तथा उनके द्वारा माता िी की िी हनरन्तर आराधना करने का सद्भाग्य िमें प्राप्त हुआ िै, इसे हवसूमृत न करें।

िमें मानव-देि की िो भेंट प्राप्त हुई िै, उसके हलए िमें आनन्द मनाना िाहिए। माता िी के यिोगान गाने तथा उनकी आराधना-सम्बन्धी प्रवृहत्तयाँ करने की क्षमता का उपिार प्राप्त करने के हलए भी िमें प्रफुक्तित िोना िाहिए। आत्मसाक्षात्कार-रूपी िरम लक्ष्य के प्राप्त्यथथ िी िमें यि दुलथभ अवसर प्राप्त हुआ िै। यहद िम इसका उपयोग आध्याक्तत्मक प्रवृहत्त-रूपी माता िी के बाह्य स्वरूप की आराधना में करते िैं, तो कालान्तर में िम

पर माता ि ी की कृपा ि ोगी तथा वि सन्तों ंका सम्पकथ, उनकी कृपा, उनके उपदिे तथा उनकी ओर से मन्त्र- दीक्षा के रूप में इस आराधना का अन्तरंग स्वरूप प्रदान करेंगी। िैसे–िैसे ि मारी आगे प्रगहत ि ोती ि ायेगी, वैसे-
वैसे माता ि ी प्रथम मन्त्र-स्वरूप में प्रकि ि ोंगी और तत्पश्चात् प्रकिा के मुख्यिार-रूप परम ध्यान-रूप में वि ि मारे समक्ष प्रकि ि ोंगी। अन्त में वि ि मारी ि ेतना को समाहध ि ारा उद्भाहसत कर देंगी; क्ोंहंक व्यक्ति में माता
ि ी का पूणथ प्राकट्य समाहध तथा आत्मज्ञान के रूप में ि ी ि ोता ि ै। इस भााँहत माता ि ी का साक्षात्कार ि ोने पर ि ीविन का धे्येय प्राप्त ि ो ि ाता ि ै, ि ीव कृतकृत्य ि ो ि ाता ि ै और माता ि ी की आराधना पूणथ ि ो ि ाती ि ै। उसके
कतथव्य-कमथ समाप्त ि ो ि ाते ि ैं और वि माता ि ी की अघिनघिनापिपीयसी ि क्ति-रूप में हवलास कर रि े परब्रह्म के सक्तिदानन्द स्वरूप का ि ाश्वत आनन्द उपभोग करता ि ै।

सडवत्रीडभवावचां ि डिमडणडिलाभंगरुडचडभ-
वंडिन्याद्याडभस्त्वां सि जनडन संडचन्यडत यः ।
स कताव काव्यानां भवडत मितां भंडगरुडचडभ-
ववचोडभवावग्देवीवदनकमलामोदमधुरैः ।।'
(सौन्दयथलिरी : १७)

ि ि-स्फहिक दरार सम सुन्दर, आद्या वाहसन, मान।
ऐसे गुण से यिु सरस्वहत माता का ि ो करता ध्यान ।।
वि करता रिना काव्यों ंकी, मिती साहिक्तत्यक उपमान ।
मधुर ि ि , मिोक भावों ंकी, हनगथत मातु कं-मुख मान ।।

ि े माता, ि ो कोई भी वहिनी आहद वृिवि–िक्ति प्रदान करने वाली देहवयों ंके साथ, ि ो ि ि ि कान्त महण
के समान भास्वर ि ैं, तुम्हारा ध्यान करता ि ै, वि मिान् कहव बन ि ाता ि ै। उसके ि ि मनोिर तथा मधुर ि ोते ि ैं
मानो सरस्वती के वदन-कमल की मधु ि ों।ं

नवमराडत्र

ॐ भूभुथवथस्विः तत्सहवतुवथरेण्यं भगो देवस्य धीमहि हधयो यो निः प्रिोदयात्'

अक्तन्तम मोक्ष का पथ

गीता गंगा च गायत्री गोडवन्देडत हृडद क्तसर्ते ।
चतुगवकारसंयुक्ते पुनजवन्म न डवद्यते ॥

ॐ हत्रलोकी-रूप सूयथ की ज्योहत का करता हाँ ध्यान ।
ीि ि ितन अक्तखल हवश्व की 'धी' करता पे्रेररत छहवमान ।।

गीता गंगा गायत्री गोहवन्द बसें यहद अन्तर में।
ी ितुगथ से यिु निीं ंहफर पुनिथन्म कालान्तर में ।

हिनकी कृपा मात्र से प्रकृत साधकों ंकी ितना में परम तत्त्व का ज्ञान उद्भाहसत िोता ि, उन देवी को नमस्कार। िो सृहि, क्तथथहत व लय रूप रिस्यमय निाक की सूत्रधार िैं, उन महिमामयी माँ को नमस्कार। िो अवि मनसातीत ब्रह्म को अपनी रिस्यमयी िक्ति से अनन्त नामरूपात्मक िगत् के मध्य में प्रकाहित करती िैं तथा िीव को माया से भ्रहमत कर इस संसारि–क्र में आबद्ध करती िैं, उन् प्रणाम। िो अपने मिासरस्वती-रूप में साधक को प्रपंि के मोिमय अक्तस्तव से मिु कर सवोपरर आनन्द अथवा कैवल्यावथथा को प्राप्त कराती िैं, उन माता िी की हवद्या माया को बारम्बार प्रणाम!

माता िी की नवरात्र की आराधना का अिो नवाँ तथा अक्तन्तम हदवस ि। अिो उनकी िी परम करुणा तथा कृपा से उनकी पिूा करने तथा उनके िरण-कमलों ंमें अपनी श्रद्धांहिल अहपथत करने का िमें अमूल्य सुयोग प्राप्त हुआ ि, हिससे िमारे मन तथा बुक्तद्ध उन्नीत िोंगें और िम िीवन के अक्तन्तम धे्येय आत्म-साक्षात्कार की ओर एक िग आगे बढ़ सकेंगे।

माता िी की कृपा असीम िै। समस्त मानव िाहत के प्रहत तथा हविे कर साधकों ंतथा हिज्ञासुओं ंके प्रहत उनकी करुणा तथा उनका से्नि अवणथनीय िै। माँ अपने बिे को अपनी गोद में लेने के हलए सदा आतुर रिती िै। इसी भााँहत यि िगज्जननी हिन्ोंनें इस क्षणथथायी हवश्व-निाक की रिना की िै तथा िो िमारे हृदय-कमल में हवरािती िैं, वि अपने असीम वक्ष में अपने िि्िुओं ंको वापस लेने को उतु्सुक रिती िैं। िो बालक इस िागहतक खेल से श्रान्त िो िुके िैं तथा हिनकी खेल में रुहि निीं ंरि गयी िै, वे िब उनकी ओर मुख कर खिे िो िाते िैं

तथा 'माँ, माँ' कि उन्ें पुकारते िैं और किते िैं, 'माँ, मुझे अब और अहधक खेलना निीं ंिै। मैं बहुत समय से तुमसे दूर पि़ गया हाँ। अब दया करो और इस बालक को अपने परम सुखमय क्रोि़ में पुनिः उठा लो।' यिी िीव का क्रन्दन िै। यिी मुमुकु्षुत्व िै। यिी आकांक्षा िै। यिी असीम का ससीम के प्रहत आह्वान िै। िब ससीम िीवात्मा यि आह्वान सुनता िै, तब वि इस निाक से हवरत िो कर उसकी ओर से मुख फेर लेता िै और माता िी के मुखारहवन्द की ओर दृहि-हनके्षप करता िै। उस समय परमा माँ के करुणामय नेत्र कुछ काल के हलए उन्मीहलत िोते िैं और उनकी हदव्य दया की रक्तियााँ इस सन्तान पर पि़ती िैं और उसे प्लाहवत कर उसको इस हवश्व-निाक की क्लाक्तन्त, अवसाद तथा धूहल से सदा के हलए मुि कर देती िैं और उसे आध्याक्तत्मक आनन्द की गूढ़ ऊाँिाइयों पर पहुाँिा देती िैं। वि माता िी के क्रोि़ में पुनिः पहुाँिता िै तथा उसके हवश्व-निाक की िीिाएाँ, समू्पणथ दुिःख तथा कि िे िो िाते िैं। उसे हनमथल आनन्द, बहु-आकांहक्षत स्वगथ में पुनिः पहुाँिने का आनन्द प्राप्त िोता िै। मि सब पहथक िैं, अपने सक्तिदानन्द-रूपी परम धाम के, अपने मूल-थथान के पथ-भ्रि बालक िैं। िम हिर काल तक भिक िुके िैं और भिक कर अपने मूल-थथान से बहुत दूर िा पि़े िैं-इसका ज्ञान िोना तथा उस सक्तिदानन्द धाम की पुनप्राथक्तप्त की तीव्र उत्किा िाग्रत करना िी आध्याक्तत्मक साधना का तात्पयथ िै, उसकी समू्पणथ प्रहक्रया िै। यिी आध्याक्तत्मक िीवन िै और यिी साधना-मागथ िै।

मि िान िुके िैं हक हवद्या माया तथा अहवद्या माया-ये दोनों ंिी परमा माता िी के स्वरूप िैं। इन उभय भावों ंिारा वि इस हवश्व-निाक के रंग-मंिपर दुगाथ, लक्ष्मी तथा सरस्वती-इन तीनों ंरूपों ंमें लीला करती िैं। कल मिने देखा हक माता सरस्वती ओंकाररूहपणी, नादरूहपणी स्वरूप में अपने परम साक्तवक रूप में तथा मनुष्य की बाह्य प्रवृहत्तयों ंमें प्रवृहत्त-रूप में हकस प्रकार व्यि िोती िैं। माता िी परम हवद्या स्वरूप िोते हुए भी उनमें अहवद्या का भी हकंहित् गूढ़ अंिरिता िै और इस अहवद्या माया के स्वरूप में वि प्रवृहत्त में सरस्वती-तत्त्व के रूप में प्रकि िोती िैं।

परनु्त सरस्वती माता मुख्यतिः हवद्यारूहपणी िैं तथा भव्य हवद्या माया स्वरूप में िी वि िीव के आन्तररक िीवन में, हनवृहत्त-पथ में अनेकहवध रूपों ंमें अपने को अहभव्यि करती िैं। आन्तररक िीवन में, हनवृहत्तपरक िीवन में प्रकि िोने वाले माता िी के इस स्वरूप का ध्यान अपने समक्ष रख कर िम आि उनके िरण-कमलों ंमें अपनी श्रद्धा तथा भक्ति अहपथत करेंगे। िम देख िुके िैं हक वि प्रवृहत्त के हलए सिथनात्मक िक्ति िैं और िमने यि भी देखा हक वि रिनात्मक िक्ति क्ोंकर िैं? सभी वसु्तओं ंके आरम्भ में वि िी हनवास करती िैं। वैज्ञाहनकों ंकी गवे णा–िक्ति माता िी िैं। कहवता के उपासक कहवयों ंकी कहववव–िक्ति माता िी िी िैं। विी संगीतकार, हित्रकार, हिल्कार तथा अन्य लहलत कलाओं ंके कलाकारों ंकी कला-हव यक प्रहतभा िै। गिन अिे ण-काल में हकये हुए वैज्ञाहनकों ंके आहवष्कार भी माता िी िैं। बाह्य प्रकृहत के तीव्र बौक्तद्धक हिन्तन से िो भी नव-सिथन िोता िै, वि भी माता िी का स्वरूप िी िै। इन आहवष्कारों ंके पररणाम स्वरूप उत्पन्न हवहवध पदाथों में माता िी िी िैं। सभी रिनात्मक कायथ-रूप में माता िी िी हवलास करती िैं। सभी व्यवसाय तथा सभी व्यापार माता िी के िी स्वरूप िैं। श्रेष्ठ हवके्रताओं ंकी व्यावसाहयक कुिलता भी माता िी िैं। मानव-िगत् के बाह्य के्षत्र में, प्रवृहत्त में वि हिक्षा-रूप में व्यि िोती िैं। इस भााँहत माता िी बाह्य िगत् में नानाहवध रूपों ंमें प्रकि िोती िैं।

अनेक में से एक अहितीय सवोत्तृकि उद्गम थथान की ओर पीछे मुिने की माता िी की हवर्िहि प्रत्यावतथन की प्रहक्रया के हव य में िमने हविार हकया। हनवृहत्त-मागथ में साधक आत्मा के अन्तमुथखी िीवन में, िीव के योग तथा साधना-पथ के आन्तररक िीवन में माता िी गुरु-दीक्षा रूप में हकस प्रकार प्रकि िोती िैं, इसे भी िम देख ुकि िैं। मन्त्र, मन्त्र िप तथा अनुष्ठान िैसी मन्त्र-साधना आहद भी माता िी िैं। स्वच्छ िुभ्र वसन तथा हदव्य सौन्दयथ से वि हविुद्ध सत्त्वीलता की साकार रूप िैं, यि भी िम देख ुके िैं।

माता िी : परम सत्त्वस्वरूप

आध्याक्तत्मक साधक के हृदय में माता िी सत्त्व-रूप में प्रकि िोती िैं तथा साधक पर िब सरस्वती माता िी की कृपा उदय िोती िै , तो उसका समस्त िीवन रूपान्तररत िो िाता िै। उसके सभी प्रकार के आसुरी तथा पािहवक भाव िनैः िनैः पर हनहश्चत रूप से हवलय को प्राप्त िोते िैं; क्योंहक सत्त्व के िुभ्र उज्ज्वल वणथ के आलोक के समक्ष तमस् का अन्धकार ठिर निीं सकता। मानव-िीवन में सत्त्व एक श्रेष्ठ सकारात्मक गुण िै। अतिः माता सरस्वती के कृपा-स्वरूप सत्त्व के आहवभाथव से तमोगुण क्षीण िोने लगता िै तथा अन्त में साधक तमोगुण के ऊपर
पूणथ हविय प्राप्त कर लेता िै। इक्तियों की अत्यन्त हनम्न प्रकार की क्षुधा, िो उसे एक समय अतीव सुखदायक प्रतीत िोती थी तथा हिसमें वि पिले रि-पि रिता था, अब उसे दुिःखरूप लगने लगती िै। वि उससे घृणा करता िै। हिसके िीवन में माँ सरस्वती हवरािती िैं, उसके िीवन से थथूल महलन भाव अदृश्य िो िाते िैं। व्यक्ति में वतथमान रिोगुण में भी पररवतथन आता िै। स्वाथथमयी वृहत्तयों से िो प्रवृहत्तयाँ उत्पन्न िोती िैं, वे सब रिोगुणी प्रवृहत्तयाँ कि्ी िाती िैं। लोभ, तृष्णा तथा स्वाथथमयी वृहत्त से उत्पन्न िोने वाली प्रवृहत्तयाँ रािहसक िोती िैं। कायथिीलता अथवा गहतिीलता सदा िी अच्छी िै। हकसी भी ध्येय के प्राप्त्यथथ हकये िाने वाले प्रत्येक प्रयास और प्रयत्न में वि अमूल्य पररसम्पहत्त िै, हकन्तु यि गहतिीलता िब स्वाथथ, लोभ तथा तृष्णािहनत तथा मानव-सत्ता के इन अकुलीन तत्त्वों से हनदेहित िोती िै, तब रिोगुण मनुष्य को बहिमुथखी बना कर उसे अहधकाहधक दृढ़ बन्धन में आबद्ध कर लेती िै। हकन्तु िब साधक के िीवन में सत्त्व िक्ति का उत्तर हदिा की ओर क्रमिः वि बढ़ता िै और सत्त्व-िक्ति उसके हनवृहत्त-मागथ में प्रकि िो कर कायथ करना आरम्भ कर देती िै, तब साधक में अन्तहनथहित रिोगुण के ऊपर उसका हनहश्चत रूप से प्रभाव पिने लगता िै।

रिस्-िो अब तक स्वाथथपरता तथा लोभ का सिायक था, विी रिस्- विीभूत िोने तथा व्यपवहतथत िो उत्तर तथा श्रेष्ठतर मागथ िारा प्रवाहित िोने लगता िै। उसमें वतथमान रिोगुणी गहत-िक्ति तमस् के बदले सत्त्व से सम्बद्ध िो िाती िै, हिसके पररणाम-स्वरूप यि िक्ति उसके आध्याक्तत्मक िीवन में एक अमूल्य पररसम्पहत्त बन िाती िै। अब इसे हनयक्तन्त्रत तथा पररष्कृत कर उि तथा अहभिात आध्याक्तत्मक कायों की हदिा में व्यपवहतथत कर हदया िाता िै। अब उसकी गहतिीलता परोपकारी कायों में पररणत िोती िै और वि करुणा, दया, हनिःस्वाथथता िैसे िुद्ध साक्तत्त्वक गुणों से अनुप्राहणत िोता िै। वि सभी प्राहणयों में हवद्यमान तथा उनके रूप में प्रकि भगवान् की कमथयोग अथवा सेवा के रूप में आराधना करने की िुद्ध भावना से प्रेररत िोता िै। इस भाँहत आध्याक्तत्मक पथ में आने वाले तमस् तथा रिस् िैसी हनम्न प्रकृहत के व्यवधान दूर िो िाते िैं। तमोगुण समाप्त िो िाता िै। दैहनक हनिा आहद के रूप में अंितिः प्रकि तमोगुण के अहतररि उसके अन्य थथूल रूपों का नाि िोता िै। िब माँ सरस्वती कृपा कर साधक के हनवृहत्त-परायण िीवन में िुद्ध सत्त्वगुण के रूप में प्रकि िोती िैं, तब रिोगुण भी उसका (साधक का) हमत्र तथा सिायक बनने लगता िै।

श्रीमद्भगवद्गीता के सतरिवें अध्याय में समस्त गुणों तथा पदाथों को सत्त्व, रि तथा तम-इन तीन हवभागों में वगीकृत हकया गया िै। यहद आप इस गुणत्रय- हवभाग को पढ़ें, तो आपको ऐसा लगेगा हक हिन पदाथों का वणथन 'साक्तत्वक तत्त्व' के रूप में हकया गया िै, वे सब माता सरस्वती के िी स्वरूप िैं। साधक तथा मुमुक्षु के िीवन में माता िी स्वयं योग तथा साधना के रूप में प्रकि िैं और अन्त में वि उसकी िेतना का ज्ञान-हवभा रूप में

उद्घिान का स्वरूप धारण करती िैं। साधक की प्रवृहत्त में सव-रूप में माता िी सदािार के रूप में व्यि िोती िै। िमें ज्ञात िै हक सदािार िी आध्यात्त्मक िीवन में समस्त सफलताओं ंका आधार िै। यि नीवं का कायथ करता िै। रािायोग के यम-हनयम सदािार के अतीव हवज्ञानसम्मत रूप िैं।

गुरु के विन वेदवाक् िैं

दीक्षा-समय में गुरु से प्राप्त गुरु-मन्त्र िी परम िि िै। माँ इस वाक् या िि के मध्य से िी परम तत्त्व के रूप में प्रकि िोती िैं। यहद माता के मन्त्रात्मक स्वरूप की सम्मानपूवथक आराधना करनी िो, तो सद्गुरु से प्राप्त मन्त्र का सतत हनष्ठापूवथक िप करना िाहिए। यहद िम इस मन्त्र की अवज्ञा करें, गुरु-प्रदत्त नाम की अविेलना करें और उसके िप में उत्सािा न प्रकि करें तो यि माँ की पूिा में त्रुहि मानी िायेगी, माँ सरस्वती की पूिा की अवज्ञा की िा येगी। िम यहद इस प्रकार माँ का अनादर करेंगे, तो िमारी आध्यात्त्मक प्रगहत अवरुद्ध िो िायेगी।

सामान्य रीहत से, साधक के योग-मागथ तथा आध्यात्त्मक िीवन में गुरु की हिक्षाओं ंतथा उनके हदन-प्रहत-हदन के उपदेिों ंके रूप में स्वयं माता िी प्रकि िोती िैं। अतएव साधक की अहभवृहत्त भक्तिभावपूणथ िोनी िाहिए तथा गुरु के उपदेिों ंको अतीव श्रद्धा तथा गम्भीर भाव से श्रवण तथा अनुिीलन करना िाहिए। उसमें असावधान निीं ंिोना िाहिए। उसे गुरु के विन को सामान्य वाणी मान लेने की भूल निीं ंकरनी िाहिए। साधक के हलए गुरु-विन िी वेदवाक् िैं; क्योंहक वे उसके हलए मन्त्र के समान िैं- **'मन्त्रमूलं गुरोवावक्यम्।'**

> इन हदनों ंगुरु के सामान्य विनों ंको सामान्य िि मान कर उन पर यथोहित मनोयोग न देने की भूल साधक-िगत् में बहुत अहधक प्रिहलत िो िली िै। सद्गुरु के साहन्नध्य में रिने वाले साधकों ंतथा हिष्यों ंमें उनके उपदेि तथा वाणी िारा प्रकि िोने वाली सरस्वती का आदर कर उन्ें ग्रिण करने में सामान्यतिः हिहथलता आ िाती िै, हिसके कारण उन्ें अत्यहधक क्षहत उठानी पड़ती िै। इसहलए गुरु-वाणी-रूप में व्यि िोने वाली माता िी के इस स्वरूप के प्रहत अपनी अहभवृहत्त में िमें बहुत सावधान रिना िाहिए। यहद िम उन्ें यथोहित भाव से ग्रिण करें और हनष्ठापूवथक उनका पालन करें, तभी िम माता सरस्वती की कृपा का उहित तथा लाभप्रद उपयोग करेंगे।

स्वाध्याय तथा उसका व्याविाररक मूल्य

आध्यात्त्मक साधना में इसके अहतररि माता िी अन्य दो हवहिष्ट रूपों ंमें प्रकि िोती िैं। िम कि िुके िैं हक सरस्वती माता वेदों ंकी प्रहतमूहतथ िैं। वेद का अथथ िै परमात्मा का अलौहकक ज्ञान। उपहन द् वेदों ंका सवोत्कृष्ट ज्ञान िै। उपहन दों ंका सारतत्त्व मानव-िाहत तक भगवद्गीता िारा पहुँिाया गया िै। अतएव, माता िी साधक के समक्ष इस अपूवथ सावथभौहमक ग्रन्थ श्रीमद्भगवद्गीता के रूप में प्रकि हुई िैं। इसी कारण सभी आध्यात्त्मक आिायों ने गीता के हनत्य हनयहमत पाठ का हनदेि हदया िै। यहद िम प्रहतहदन गीता का स्वाध्याय करें तथा उसमें हदये हुए हसद्धान्तों ंको िनैःिनैः अपने िीवन में आत्मसात् करने का प्रयत्न करें, तभी गीता-रूप में प्रकि हुई माता सरस्वती की आराधना िोगी। िो साधक पूज्य गुरुदेव के िरण-कमल में रि कर हदव्य िीवन यापन में प्रयत्निील िैं, उन सभी के हलए हनधाथररत 'हदनियाथ' में गीता के स्वाध्याय पर हविे बल हदया गया िै। िम यि भी िानते िैं हक पातंिल योग-दिथन के 'हनयम' का स्वाध्याय एक मित्त्वपूणथ अंग िै।

परा िि अथवा मूल िि स्वरूपा माँ सरस्वती हवकास के क्रम से प्रथम ध्वहन, तत्पश्चात् वाणी अथवा वाक् तथा तदनन्तर वणथमाला के अक्षर-रूप में प्रकि िोती िैं। उसके पश्चात् अक्षरों ंके संयोिन से नाम बनते िैं

तथा नाम का अथथ और उसके साथ रूप प्रकि िोता िै। यि सब िम पिले देख िुके िैं। इस भााँहत अपने धमथिास्त्रों ंमें माता िी अक्षर-रूप में प्रकि हुई िैं। इससे अपने सभी धमथिास्त्र तथा आध्याक्तत्मक ग्रन्थ सरस्वती-तत्त्व के पुंिीभूत रूप िैं। हलक्तखत अक्षरों ंतथा ििों ंके रूप में माता िी िी परब्रह्म का ज्ञान िमें प्रदान करती िैं। अतिः िब िम हनत्य स्वाध्याय में आध्याक्तत्मक ग्रन्थों ंका पाठ करते िैं, तब िम वसुतुतिः िि-रूप में उसमें हनवास कर रिी माता सरस्वती के सम्पकथ में आते िैं और वि िमारा प्रत्यक्ष मागथ-दिथन करती िैं।

स्वाध्याय दैहनक साधना का एक प्रधान अंग िै। साधक के िीवन में इसका मित्त्व अनेकहवध िै।
स्वाध्याय साधना के क्षेत्र में िो मित्त्वपूणथ भाग अदा करता िै, उसके कम-से-कम एक अंग पर िम अभी हविार करेंगे; क्ोंहक इससे यि स्पि िो िायेगा हक यि साधक के हविार तथा भाव में सत्त्व तथा दैवी गुणों ंके संवधथन में क्ोंकर सिायक िोता िै? मनुष्य की आध्याक्तत्मक साधना का प्रकार तथा उसका समूपूणथ स्वरूप उसके संस्कारों ंके ऊपर हनभथर करता िै। मन सब-कुछ िै और मन संस्कारों ंका गट्ठर मात्र िै। इन संस्कारों ंका सृिन व्यविार से िोता िै। बाह्य पदाथों के सम्पकथ तथा मनुष्यों ंके संसगथ से अपने मन के ऊपर संस्कारों ंकी अहधकाहधक छाप पड़ती िै। बाह्य व्यविार िगत् में और उसमें भी हविे कर कमथयोग के क्षेत्र में हनतान्त अनाक्तत्मक स्वरूप के संस्कार प्राप्त िोते िैं िो आध्याक्तत्मक िीवन तथा आध्याक्तत्मक हवकास के पूणथतया हवरोधी िोते िैं।

मनुष्य के दैनक्तन्दन िीवन की सामान्य बाह्य प्रवृहत्तयों ंमें से हनत्यप्रहत व्यविार के, प्रवृहत्तयों ंके तथा हव यों ंके संस्कार प्रिुर मात्रा में पैदा िोते िैं। यहद ऐसे संस्कार हदन-प्रहत-हदन बढ़ते गये, तो वे व्यक्ति को अधोगहत की ओर ले िाते िैं। वे उसको बहिमुथखी बनाते िैं तथा उसके मन को अहधकाहधक हव याकार बनाने वाली भयानक िक्ति बन िाते िैं। परन्तु ऐसे संस्कारों ंसे सवथा दूर रिना भी िक् निीं ंिै। अहधकांआध्याक्तत्मक साधकों ंके हलए ऐसे समस्त व्यविारों ंका पूणथ रूप से त्याग करना सम्भव निीं ंिै। इसीहलए उन्नतकारी धमथग्रन्थों ंके हनत्य स्वाध्याय िारा पहवत्र आध्याक्तत्मक हविारों ंको मन में प्रहवि कर इस प्रकार के संस्कारों ंका, इस प्रकार के हविारों ंका प्रहतकार करने के हलए सुन्दर मनोवैज्ञाहनक िोध की गयी िै।

हनत्य, हनयहमत रूप से आयासपूवथक हकये गये स्वाध्याय से साधक प्रहतहदन िीवन के उन्नायक तथा रूपान्तरकारी हविुद्ध आध्याक्तत्मक हविार-पुंि ग्रिण करता िै हिससे उसके मन में प्रबल सकारात्मक, साक्तत्त्वक तथा आध्याक्तत्मक संस्कारों ंकी छाप पड़ती िै िो दैहनक िीवन-व्यविार में अपररिायथ रूप से एकहत्रत हुए अिुभकारी लौहकक संस्कारों ंको पराभूत करने में सिायक िोते िैं। साधक में नवीन भाव िाग्रत करने की उनमें क्षमता िोती िै। वे साधक के हविारों, ंसंस्कारों ंतथा स्वयं भावों ंको रूपान्तररत कर देते िैं। सन्तों ंकी िीवन-गाथाओं, ंगीता, भागवत, रामायण, बाइहबल, कुरान, िेन्द अवेस्ता, धम्मपद आहद के दैहनक स्वाध्याय िारा माता सरस्वती के साथ सम्बन्ध-थथापन से साधक के स्वभाव को साक्तत्त्वक तथा आध्याक्तत्मक हविारों ंका आिार हनयहमत रूप से हमलता रिता िै।

मिें ऐसा लगता िै हक मन में इस प्रकार के िक्तििाली, हनश्चयात्मक तथा आध्याक्तत्मक हविार-समूि का सृिन धारणा तथा ध्यान-काल में बहुत सिायक िोता िै। साधक िब ध्यान करने का प्रयास करता िै, तभी उसका मन बािर भिकने लगता िै। ध्यान की प्रारक्तम्भक अवथथा में मन के भिकने की वृहत्त बहुत बलवती िोती िै। यि समस्त प्रहक्रया निीीपरर की क्रीड़ा-सी, एक प्रकार का हवरुद्धाक थण-सी िोती िै। मन भिकने लगता िै और साधक उसे पुनिः पुनिः लक्ष्य पर केक्तित करता िै। यिााँ एक अवांहछत पररक्तथथहत उपक्तथथत िोती िै हक मन थथूल, वै हयक तथा लौहकक हविार-क्षेत्र में िी रमण करता िै।

सतत अभ्यास तथा तीव्र वैराग्य के हबना मन की भ्रमणिीलता को रोकना सम्भव निीं ंिै; परन्तु हकंहित् पररवतथन अवश्य िक् िै। यहद हनत्य हनयहमत स्वाध्याय िारा मन में साक्तत्त्वक तथा िक्तििाली हविारों ंका हसंिन हकया िाये, तो ध्यान में हवक्षेप के समय उनका भ्रमण क्षेत्र धीरे-धीरे साक्तत्त्वक बन िाता िै। मन हव यी हविारों ंमें

भिकने के थथान में अब पहवत्र हविारों,ं उदात्त हविारों ंतथा सात्त्त्वक हविारों ंमें हविार करता िै। मन का यि भ्रमण साधक के हलए अहधक िाहनकारक निीं ंिोता। इस भााँहत भी 'स्वाध्याय' साधक के िीवन में एक अमूल्य पररसम्पहत्त िै।

हमतभा ी बनो

आइए, अब िम साधक के आिार के सम्बन्ध में हविार करें। िम अब साधकों ंके हनत्य आिार में अतीव उपयोगी कहतपय सूिनाएँ देंगे। िम देख िुके िैं हक वाणी माता सरस्वती का स्वरूप िै। मााँ सभी प्राहणयों ंमें 'वाक्' रूप में प्रकि िोती िैं। माता िी वाक्शक्ति िैं। हनयमपूवथक मौन िारा वाणी का संयम करना भी माता सरस्वती की आराधना िी िै। इस प्रकार माता िी की वाक्शक्ति संिि करने से िक्ति-संग्रि िोता िै हिसका उपयोग प्रत्यािार, धारणा तथा ध्यान िैसी योग की प्रहक्रया में हकया िाता िै। मौन-साधना िारा संहित वाक्शक्ति, हववेक, हविार तथा
आत्म-हवश्लेषण के प्रयास में बहुत सिायक िोती िै। यि तो व्यविार में अनुभूत ज्ञान िै। कोई भी साधक मौनाभ्यास िारा इसका स्वयं अनुभव कर सकता िै। िब तक वाणी का, वाक्शक्ति का व्यय िोता िै, मन बहिमुथखी िोता िै, तब तक सूक्ष्म हविार तथा आत्म-हनरीक्षण िक् निीं ंिै; परन्तु िब मौन िारा वाक्शक्ति का संिय हकया
िाता िै, तभी मन अन्तमुथखी बनता िै तथा उसके पररणाम स्वरूप हववेक, हविार तथा आत्म-हनरीक्षण करना सम्भव िो पाता िै।

सत्य बोलो

वाक्शक्ति की पहवत्रता बनाये रखने का मिान् उत्तरदाहयत्व साधक के हिर पर िै। वाणी-स्वरूप में रिने वाली माता सरस्वती की िक्ति की पहवत्रता की सुरक्षा िमारा कतथव्य िै। िम िानते िैं हक असत्य अहनिकारी तथा
आत्म-हवरोधी िै। अतएव, परम सत्य अथवा आत्यत्त्न्तक सत्य के साक्षात्कार के आकांक्षी साधक को अपनी वाणी में उस सत्य को प्रकि करने का सदा सावधानीपूवथक प्रयास करना िाहिए। सत्य बोलने का हनयम लेने से वाणी में िी हवमलता आती िै, वि अतीव मित्त्व की िै। सत्यवाहदता के मिान् सद्गुण का वणथन िीों ंिारा निीं ंिो सकता
िै। इतना िी किना पयाथप्त िोगा हक यहद साधक में सत्यवाहदता निीं ंिै, तो उसका समूपूणथ आध्यात्त्मक
[illegible] हृदय से प्रयास हकये हबना साधक के िीवन में रंि मात्र भी सिी, ठोस तथा थथायी आध्यात्त्मक प्रगहत निीं ंिो सकती। इस हव य में कोई मध्यवती मागथ निीं ंिै। मनुष्य या तो सत्यवादी िोता िै अथवा असत्यवादी। िब तक साधक पूणथ रूप से सत्यवादी निीं ंबनता, तब तक आध्यात्त्मक प्रगहत उसके हलए दुरािा अथवा स्वप्न मात्र िै। वि कभी भी साकार निीं ंिो सकती। यि एक अिल सत्य िै। अतः यहद साधक अपनी साधना के प्रहत गम्भीर िै, अपनी खोि में हनष्ठावान् िै, यहद उसमें इस मत्यथिील भौहतक िीवन के कि और िोक से, रोग तथा मृत्यु से संकुल इस पाहथथव िीवन के पाि को हवदीणथ करने की सिी ज्वलन्त कामना िै, यहद अपने को मुि कर िाश्वत आनन्द भोगने की उत्कण्ठा िै तो उसे सत्य का अिल उपासक बनना िी पड़ेगा; तभी माता करुणामयी िो उसके ऊपर कृपा करेंगी तथा उसे परम सत्य का ज्ञान प्राप्त िोगा।

माता सरस्वती के परम वैभविाली तथा परम तेिोमय स्वरूप तथा सद्गुणों ंके हिरोमहण तुल्य 'सत्य' पर हनत्यप्रहत हनहश्चत रूप से ध्यान करने का िम आि से िी संकल्प लें। सत्य के स्वरूप में माता िी की आराधना करने से हृदय में आत्मा की ज्योहत प्रहतहष्ठत िोगी। िब तक व्यक्ति के हृदय में सत्य की प्रहतष्ठा निीं ंिोती, तब

तक उसमें आत्म-ज्योहत प्रकाहित निीं ंिो सकती। अतिः िमें माता सरस्वती का सत्य-रूप में हनत्यप्रहत ध्यान करना िाहिए।

सत्य िी मिान् योग िै। इस कहलयुग में सत्य िी मिानतम तप िै। हिसने सत्य को प्राप्त कर हलया, उसने परमात्मा को प्राप्त कर हलया। माता सरस्वती के सत्य-स्वरूप की परम महिमा का िमें अपने मन में ध्यान रखना िाहिए। उस पर ध्यान करना िाहिए। उसका हिन्तन करना िाहिए। िमारे हविार, िमारी वाणी तथा िमारे कमथ में सत्य अनून रूप से प्रकाहित िो, इसके हलए िमें प्रत्येक सम्भव उपाय िारा हनरन्तर प्रयास करते रिना िाहिए। इस अत्यावश्यक हकनुतु अतीव दुष्कर कायथ में माता िी की कृपा िमारी सिायता करे!

हप्रय बोलो

भा ा, वाणी एक सवथिक्तिाली वसुतु िै, इस मानव-लोक में एक मिान् िक्ति िै। वाणी का उपयोग रिनात्मक और सिंनात्मक कायों के हलए भी हकया िा सकता िै तथा संिारक और हवनािकारी कायों के हलए भी िो सकता िै। समस्त सिथन का मूल माता सरस्वती िी िैं, यि िम पिले देख िुके िैं। अतिः प्रत्येक साधक को इस मिान् वाक्शक्ति के उपयोग में सदा सावधान रिना िाहिए। परमात्मा िारा सृहित कुषितम प्राणी के मन को भूल कर भी कठोर िब्दों ंके प्रयोग िारा न दुखाने का उसे संकल् लेना िाहिए।

हिस वाणी से हकसी को आघात पहुाँिे, ऐसी कठोर वाणी का साधक को सवथा त्याग करना िाहिए। उसे मधुर वाणी बोलनी िाहिए। यहद हकसी समय मधुर वाणी बोलना िक् न िो, तो ऐसे समय में मौन-सेवन िी श्रेयस्कर िै। इससे हनम्नतर कोहि की बात यि िोगी हक हिसके प्रहत कठोर िब्दों ंको व्यवहृत हकया िो, उससे तुरन्त खेद प्रकि करते हुए क्षमा-यािना की िाये। पर यि तो हनकृि कोहि के लोगों ंकी बात िै। िमें तो सदा उत्तम अहधकारी बनने का आकांक्षी िोना िाहिए अथाथत् िमारी वाणी सदा िी हनतान्त मधुर िोनी िाहिए। इन तीन बातों ंको ध्यान में रखें-हमत भा ण, सत्य भा ण तथा मधुर भा ण।

अपनी वाणी पर संयम रखें

मैं एक बार पुनिः कहाँगा हक हवश्व की सिथनिक्ति माँ सरस्वती-स्वरूपा वाणी का उपयोग दूसरों ंके सियताथथ करना िाहिए। िमारी वाणी हनरथथक न िो। बोलने की आवश्यकता पिे, तो भगवान् के हव य में तथा हवश्व के अन्य उन्नत आदिों के हव य में िी ििाथ करें। दूसरों ंको आश्वासन देने, प्रेरणा देने, मागथ-दिथन करने, हिक्षा देने अथवा अन्य हकसी रूप में सिायक िोने में िी माता सरस्वती की वाणीिक्ति का उपयोग करें। आध्यात्त्मक साधना तथा सत्य की आध्यात्त्मक खोि के क्षेत्र में हनरथथक बातिीत का सवथा पररिार करना िाहिए। व्यथथ के वाताथलाप से िब्दिक्ति अथवा वाक्शक्ति में हनवास करने वाली माता सरस्वती का अपमान िोता िै।

साधक को कभी भी अश्लील िब्द निीं ंबोलने िाहिए। एक बार आदत पि िाये, तो उसको छोिना कहठन िो िाता िै और उसमें भी बुरी आदतों ंके हव य में तो यि कथन अक्षरििः सत्य िै। बुरी आदतों ंकी अपेक्षा अच्छी आदतों ंका त्याग करना सरल िै; क्योंहक बुरी आदतें मनुष्य की हनम्न प्रकृहत में दृढ़ता से खहित िोती िैं। इस प्रकार के आिरण की भूतकाल में बारम्बार पुनरावृहत्त िोने से ये बुरी आदतें उसके थथूल पािवी अंग में दृढ़ता से मूलबद्ध िो िाती िैं। आि संसार में पिपित्तर प्रहतित अहिि और पिीस प्रहतित िहि वाणी का व्यविार में उपयोग देखने में आता िै। अहधकांि लोगों ंके हलए तो अश्लील तथा अहिि िब्दों ंका दैहनक बातिीत में उपयोग

एक सामान्य बात ि◌ो गयी ि◌ै। उन्ं उनमें कुछ हवि◌े अनौहित्य निीं ◌ंप्रतीत ि◌ोता ि◌ै; हकनु्तु साधक के ि◌ीवन का यिी मानदण्ड निीं ◌ंि◌ोना ि◌ाहिए। साधक को अपनी वाणी में आपहत्तिनक ि◌ि◌ों ◌ंतथा पदों ◌ंका प्रयोग निीं ◌ंकरना ि◌ाहिए। उसकी वाणी गंगा ि◌ी के पहवत्र ि◌ल की भााँहत हनमथल ि◌ोनी ि◌ाहिए।

हविुद्ध सत्त्व-रूप में माता सरस्वती को व्यि करने के ये सब मागथ ि◌ैं। ये सब आध्याक्तत्मक सद्गुण ि◌ैं और अपने में सत्त्व की वृक्तद्ध करने में सिायक ि◌ोते ि◌ैं तथा उसके आध्याक्तत्मक हवकास में सीधे योगदान देते ि◌ैं। साधक के आभ्यन्तररक मागथ में हनवृहत्त-स्वरूप में प्रकि ि◌ोने वाली भगवती मााँ के हवहवध रूपों ◌ंको ि◌में स्मरण रखना ि◌ाहिए। अि आपके समुमुख ये थ्ोि़े से रूप प्रसुतुत हकये गये ि◌ैं। इस हव य में यहद ि◌म हविार करें, तो ि◌में पता ि◌लेगा हक माता ि◌ी हकन हवहवध रूपों ◌ंसे साधक के व्यक्तिव को आपूररत करने का प्रयत्न करती ि◌ैं। िि ि◌म सत्त्वगुण के हवरोधी तत्त्वों ◌ंसे अवगत ि◌ो ि◌ायेंगे, तब माता सरस्वती के स्वरूप के हवरोधी सभी कायों का पररिार कर सकेंगे तथा अपने आन्तररक ि◌ीवन तथा स्वभाव के उन तत्त्वों ◌ंको उत्पन्न करने, हवकहसत करने तथा वृक्तद्ध करने के हलए श्रम करेंगे हिनमें वे हवि◌े रूप से प्रकि ि◌ैं। ि◌म अिुद्ध तथा अध्यात्म-हवरोधी वसु्तुओं ◌ंका पररत्याग कर देंगे और अपने स्वभाव को अहधक-से-अहधक ि◌ुद्ध, साक्तत्त्वक बनायेंगे। अन्त में ि◌म अपने को आध्याक्तत्मक ि◌ेतनावथथा में पूणथ रूप से हवकहसत करने में सफल ि◌ोंगे हिसके पररणामिन्य अपने स्वरूप का साक्षात्कार कर स्वरूप-ज्ञान प्राप्त करेंगे और तब यि घोह त कर सकेंगे- "मैं न तो मन हाँ और न यि ि◌रीर ि◌ी। मैं अमर आत्मा हाँ।"

"ि◌ुद्धोऽहि, बुद्धोऽहि, डनरंजनोऽहि, संसारमायापररवडजवतोऽहम्,"
"दिो निां जीवो निां प्रत्यगडभन्नो ब्रहै्मैविाम्, "
"सक्तिदानन्द स्वरूपोऽहम्।"

ना मैं मन हाँ, ना मैं तन हाँ, अमर आत्मा का हाँ रूप।
ुद्धि भी हाँ, बुद्ध भी हाँ मैं, और हनरंनि का हाँ रूप ॥
गि की माया पार कर ि◌ुका, देव निीं ◌ंना ि◌ीव का रूप।
सबसे हभन्न ब्रह्म ि◌ी हाँ मैं 'सत्-हित्-आनन्द' ि◌ुद्ध स्वरूप ।।

हिस साधक ने माता सरस्वती की सिे हृदय से आराधना की ि◌ै तथा हिसने माता सरस्वती की कृपा प्राप्त कर ली ि◌ै और माता सरस्वती हिसका प्रथम प्रकि रूप ि◌ैं, उस परमात्मा का प्रकाि हिसे प्राप्त हुआ ि◌ै, उस साधक के ये ि◌िि उद्गार ि◌ैं।

इडा देवहूमवनुयवज्ञनीबृिस्पडतरुक्थामदा डनि डसषडद्वश्वे देवाः सूक्तवाचः पृडर्डव मातमाव मा डिसीमवधु मडनषे्ये मधु जडनषे्ये मधु वक्ष्याडम मधु वडदष्याडम मधुमतीं ◌ंदेवेभ्यो वाचमुद्यास ि◌ुश्रूषेण्यां मनुषे्येभ्यसं्तं मा देवा अवनु् ि◌ोभायै डपतरोऽनुमदनु् ।'

इडा, देव, मनु, यज्ञ की देवी, बृिस्पहत किते मधुर।
हवश्वदेव सुन्दर सूक्ति से यि वाक् किते मधुरं ।।
पृथ्वी माता देव आहद करते पे्ररेरत हविार मधुर।
मधुर हाँ किता, मधुर कहाँगा, देवोहप्रय वाणी मधुर ।।
अतिः पालने योग्य मनुष्यों ◌ंको सतं्यं वाणी मधुरं।
रक्षा करते देव, समथथन हपतर करें, ि◌ोभा मधुरं ।।

डवजयादिमी

मिान् लक्ष्य तथा उसकी उपलक्तब्ध

तवामृतस्यक्तन्दडन पादपंकजे
डनवेडितात्मा कर्मन्यडदच्छडत ।
क्तसर्तेऽरडवन्ेदे मकरन्दडनभवर
मधुव्रतो निुरसं डि विीते ।।

रिण कमल से हनिःसृत अमृत में प्रहवि हिसकी आत्मा।
कैसे भिे अन्य थल को िब लगन लगी िो तुझमें माँ ।।
ज्यों ंपराग में लीन भ्रमर िो, कमल मध्य में क्तथथत माँ।
मधुर ईख-रस क्योंकर ििो, िखकर भक्ति-अहमय रस माँ।

आि माता िी के हविय-हदवस का मिोत्सव िै। इस हविय हदवस पर समस्त देव प्रसन्न िोते िैं तथा समस्त मानव िाहत आनन्दाहतरेक में मग्न िोती िै; क्योंहक उन्ें यि परमोतृकि आश्वासन प्राप्त हुआ िै हक वे यहद हवपद् और आपद् में पि कर सियताथथ माँ की ओर मुिेंगे, तो माँ उन्ें िक्ति और सिाय्य अवश्य प्रदान करेंगी; क्योंहक िो हवपहत्त में पि कर माँ के हदव्य िरणों ंमें िरणापन्न िोता िै, माँ उसकी रक्षा करती िैं। माता िी अनन्त िक्ति का आधार मिािक्ति िैं। अतिः उनके सम्मुख िाते िी िमारी हनबथलता हतरोहित िो िाती िै। समस्त अमंगल, अज्ञान तथा मोि की िक्ति के ऊपर मित् िय-लाभ का कायथ सम्पन्न िोता िै और माता िी के साथ हवियोत्सव का आनन्द मनाते िैं। हवियादिमी साधक के हवश्वास, िक्ति तथा सािस-प्राक्तप्त का परम हदवस िै।

इस हदवस को सभी साधकों ंतथा भगवान् की खोि में रत भिों ंको मिािक्ति तथा सािस प्राप्त िोता िै। इसका कारण यि िै हक माँ ने उनके हदव्य भाव के पूणाथधार रूप में प्रकाहित िोने के मागथ में अन्तराय-रूप में आने वाली आसुरी िक्ति को ध्वंस कर परब्रह्म के धाम के प्रविे−ार को उद्घाहित कर हदया िै। आि के परम पहवत्र हदवस पर माता िी की आराधना मिामाया के परम हविुद्ध हवद्या-स्वरूप का पूिन िै। आि तक नवरात्र के हदनों ंमें मानव-व्यविार के इस दृश्य िगत् में प्रकि हुए माता िी के हवहवध रूपों ंकी उपासना िमने की, हकन्तु हवियादिमी के हदन से माता िी के हवद्या और अहवद्या-रूपी बाह्य स्वरूपों ंके परे परािक्ति के हविुद्ध हवद्या माया के मुखारहवन्द का िम दिथन करते िैं। इस रूप का दिथन करना स्वयं परब्रह्म की अगाध तथा अतल गिराइयों ंका दिथन करना िै।

कारण, िमने इस पुस्तक के प्रारम्भ में यि किा था हक माँ परब्रह्म के अहतररि अन्य कुछ भी निीं ंिै। वि परब्रह्म िी माता िी िैं। अतएव, अपने हविुद्ध हवद्या माया रूप में वि स्वयं परब्रह्म िै। इसी से आि इस परम मिान् तथा मंगलकारी हवियादिमी के हदवस पर माँ के उस अत्युज्ज्वल दीप्तमान हवद्या-रूप को, आत्मज्ञान-प्रकािक रूप को िम प्रणाम करते िैं।

आि के हदन हनम्न-भाव का हकसी भी रूप में अक्तस्तत्व निीं ंिै। हकसी प्रकार की आसुरी सम्पहत्त निीं ंरि गयी िै। कुत्सित वृहत्त का कोई हिह्न अवि निीं ंरिा िै। अन्धकार पूणथ रूप से ध्वस िो गया िै। इसका पूणथ हतरोभाव िो गया िै। विाँ एकमात्र माँ का साम्राज्य व्याप्त िै। माँ इस समय असीम हिद्घन िैं। माँ के इस तेिोमय स्वरूप की उपासना उस परब्रह्म की श्रेष्ठ उपासना में अपने को हवसिथन करना िै। इस भाँहत अब िम उस परब्रह्म की पूिा तथा उपासना आरम्भ करते िैं ििाँ पहुँि कर िन्म-मृत्यु का दुि िक्र समाप्त िो िाता िै। यिी वि िाश्वत प्रकाि का धाम िै ििाँ िाने के पश्चात् िोक तथा दुिःख में प्रत्यावतथन निीं ंिोता। िम उस परम धाम को सदा के हलए प्राप्त कर लेते िैं िो हक समस्त िोकों, ं समस्त किों ंतथा मोिों ंसे परे िै। यि साधक, हिज्ञासु तथा समस्त

मानव का ि रम लक्ष्य िै। वास्तव में एकमात्र इस सविो ध्येय की उपलक्तब्ध के हलए िी ि में इस ि गत् में यि मानवर्न्म प्राप्त हुआ िै। संसार के अन्य पदार्थों के प्राप्त्यथथ अपनी भाग-दौ भ्रामक एवं हनरथथक िै। इस अमूल्य र्न्म का एकमात्र ओिय, उद्देश्य तथा लक्ष्य परब्रिा का साक्षात्कार करना िै।

गुरु :परब्रह्म की थथूल मूहतथ

ओि के यिस्वी हदवस को आध्याक्तत्मक िीवन के अतीव गुप्त रिस्य पर हविार करने के अवसर का लाभ उठायें। इस दृश्य गित् में हवलस रिी, साधक में हभन्न-हभन्न गुणों ंिारा व्यि हुई तथा मनुष्य के िीवन और उसकी प्रवृहत्तयों ं में हभन्न-हभन्न स्वरूपों ं में प्रकि हुई माँ के दुगाथ, लक्ष्मी तथा सरस्वती-इन हत्रहवध रूपों ं का ि मने हविार हकया; परन्तु इन सबमें उनके साथ मनुष्य के व्यक्तिगत सम्बन्ध का कोई भाव न था। माता िी अपने एक हवहिि एवं गूढ़ स्वरूप में भी प्रकि िोती िैं। हकसी हदव्य व्यक्ति के रूप में माता िी का यि गूढ़ स्वरूप व्यि िोता िै। माता िी स्वयं गुरु के रूप में प्रकि िोती िैं, इस गुप्त रिस्य का ज्ञान साधक को परमात्मा अथवा माता सरस्वती की कृपा से िी िोता िै।

हिष्य के हलए गुरु माता िी की हवद्या माया तथा हवद्यार्क्ति का प्रत्यक्ष प्राकट्य िै। साधक के हलए सद्गुरु माता िी का िी स्वरूप िै। साधक ने हिस आध्याक्तत्मक व्यक्ति को अपने मागथ-दिथक तथा गुरु के रूप में स्वीकार हकया िै, वि उसके हलए भगवती माता िी का साक्षात् साकार स्वरूप िै, ऐसा उसे पूणथतम भाव से मानना िाहिए। माता िी की इस भावना के आधार के ऊपर िी साधक के आध्याक्तत्मक िीवन का प्रासाद क्तथथत िोता िै। हिन्दू-संसूकृहत का समूपूणथ तत्त्व-ज्ञान इस प्रकार की भावना पर िी हनभथर करता िै। यि एक अपूवथ भावना िै हिसकी समता संसार की हकसी भी अन्य संसूकृहत में निीं ंहमलती।

सद्गुरु के व्यक्तिव में परब्रह्म का दिथन िी साधक की आध्याक्तत्मक खोि की सफलता का मूल आधार िै। इस प्रकार साधक-वगथ ने हिस व्यक्ति-हविे की िरण में िा कर उसे अपने हृदय के अन्तरतम प्रकोष्ठ में अपने आध्याक्तत्मक मागथ-दिथक के रूप में स्वीकार हकया िै, उसके हलए विी सद्गुरु साक्षात् परािक्ति का स्वरूप िै। वि ब्रह्मा िै, वि हवष्णु िै, वि मिेश्वर िै, वि िक्ति िै और विी स्वयं अक्षर परब्रह्म िै। िाश्वत सत्ता की खोि में सद्भावपूवथक तत्पर हकसी भी साधक को इस सत्य को एक क्षण के हलए भी दृहि से ओझल निीं ंिोने देना िाहिए, न हवलग करना िाहिए और न उसे हवसूमृत िी करना िाहिए।

साधक की दृहि के समक्ष गुरु का मानव-स्वरूप निीं, ं वरन् उसके थथान में परब्रह्म का तेिोमय साकार स्वरूप उपक्तथथत िोना िाहिए। समग्र हवश्व के साधकों ंतथा हिज्ञासुओं ंसे िो वे पूवथ के िों ंअथवा पहश्चम के, मेरी यि हवनम्र सूिना तथा हवनती िै। िो व्यक्ति हकसी का भी अनुयायी िो, परन्तु एक बार अपने अन्तिःकरण में हकसी को सद्गुरु रूप में स्वीकार करने के पश्चात् उसके प्रहत कैसा भाव रखना िाहिए, इस हव य में भी मेरी यि साधारण-सी सूिना िै।

सद्गुरु के िीवन्त व्यक्तिव में परािक्ति माता िी का िुद्ध हवद्या माया-स्वरूप िी व्यि िो रिा िै-यि भावना हितनी िी अहधक दृढ़ िोगी, उतनी िी मात्रा में िमारी आन्तर िेतना में हदव्य ज्ञान िाग्रत िोगा तथा उतनी िी मात्रा में आत्म-साक्षात्कार में िमें सफलता प्राप्त िोगी। अतिः अपने सद्गुरु के िरण-कमलों ंकी िरण स्वीकार करने वाले प्रत्येक साधक तथा हिष्य को स्मरण कराया िाता िै हक उन्ें गुरु-भगवान् का पूिन करना िाहिए। सभी साधक हिन श्लोकों ंका प्रहतहदन पाठ करते िैं, उनमें इस मिागुह्य रिस्य तथा परम सत्य का हनदेि हकया गया िै :

गुरुब्रवह्मा गुरुडववषुणुगुवरुदेवो मिश्वरः ।
गुरुः सिाात्परं ब्रह्म तसै्मै िीगुरवे नमः ।।
ध्यानमूलं गुरोमूवडतवः पूजामूलं गुरोः पदम् ।
मन्त्रमूलं गुरोवावक्ंयं मिोमूलं गुरोः कृपा ।।
तं्वंडि डवषुणुडववरंडचसं्त्वं तं्वंच देवो मिश्वरः ।
त्वमेव िक्तक्तरूपोऽडस डनगुवणसं्त्वं सनातनः ।।'

गुरु ब्रह्मा िै गुरु हवषुणिैऔर मिेश्वर िै गुरुदेव ।
अतिः दण्डवत् गुरुदेवकोपरब्रह्म साक्षात् गुरुदेव ।।
गुरुमूहतथ ध्यान-मूलिैगुरुपद िैं पूिा के मूल ।
मन्त्रमूल सम गुरु-वाक्िैंगुरु कृपा िै मोक्ष का मूल ॥
आप हवषुणु िैं आप िैंब्रह्माआप िी देव मिेश्वर िैं।
िक्तिरूप सम आप िीिीहभत हनगुथण िाश्वत ईश्वर िैं।।

गुरु का सत्य स्वरूप क्ा िै? उनके हकन स्वरूपों ंका िमें अनुभव करना िाहिए?

यस्यान्त्र नाडद मधं्यं न डि करचरणं नामगोतं्रं न सूत्रम् ।
नो जाडतनैव वणो न भवडत पुरुषो नो नपुंसो न च स्त्री ।।
नाकारं नो डवकारं न डि जडन मरणं नाक्तस्त पुणं्यं न पापम्।
नो ततं्त्वं तत्त्वमेकं सिजसमरसं सद्गुरुं तं नमाडम ।।'

नाम-गोत्र-करि–रण-सूत्र नहि आहद-मध्य हिसके अन्तर।
िाहित-वणथ नहिं पुरु नपुंसक नहि स्त्री का िै अन्तर ।।
कमथ हवकार िन्म-मरण नहि पुण्य-पाप से िो हनलेप।
िसि समरस नमिः सद्गुरु तत्त्व निीं ंपर तत्त्व िै एक ।।

हदव्य हवद्या माया के व्यि स्वरूप के मिान् रिस्य का स्वल् हववरण इस पहवत्र स्तवन में िमें देखने को हमलता िै।

मिान् धमथिास्त्रों ंका सारतत्त्व

आि हविय के गौरवपूणथ हदवस पर हवियी हवद्या-माया-स्वरूपा भगवती माता िी की िम िो आराधना कर रिे िैं, वि सद्गुरु के आध्याक्तत्मक व्यक्तिव में तथा उसके िारा प्रकि िो रिे सवोपरर परब्रह्म की िी पूिा िै। िमने हवहवध प्रकार से माता िी की आराधना की िै। आि िमने धमथग्रन्थों ंके पाठ िारा हवद्यारम्भ से हविे कर माता िी के वाङ्मय स्वरूप की आराधना करने का प्रयत्न हकया िै। गीता, ब्रह्मसूत्र, भागवत, रामायण इत्याहद श्रे्रेष्ठ धमथिास्त्र माता िी के वाङ्मय-स्वरूप िै।

धमथिास्त्रों ंके पाठ से माता िी के वाङ्मय स्वरूप की आराधना हकस प्रकार िोती िै, इस हव य में यिाँ कुछ िी किना अप्रासांहगक न िोगा। िम देख िुके िैं हक स्वाध्याय साधक के हलए एक हवहि प्रकार की

प्रहक्रया ि; परनु्तु यि िीवन का व्याविाररक मागथ भी ि। स्वाध्याय िमारी आकांक्षाओं, ं िमारे आदिों तथा िमारे दैहनक िीवन के व्यविारों ंका सुन्दर हनमाथण करता ि। अतएव गीता, ब्रह्मसूत्र, भागवत, रामायण तथा मिाभारत िैसे धमथग्रन्थ िमारे आध्यात्त्मक िीवन में श्रेष्ठ मागथ-दिथन प्रदान करते िैं।

भगवद्गीता के िारा माता िी क्ा सार प्रदान करती िैं? भगवद्गीता िारा माता िी का एक िी आदिे ि और वि ि त्याग। गीता का अथथ ि त्याग। गीता त्याग का रिस्य समझाने वाला धमथग्रन्थ ि। गीता किती ि हक इस व्याविाररक िगत् से सम्बद्ध समूपूणथ पदाथों का त्याग करना, अपने कतृथव-अहभमान, अिंता और ममता का त्याग करना तथा समूपूणथ हवश्व भगवान् का हवराि् स्वरूप ि और िमारे सभी कमथ उस हवराि् की पूिा िैं, ऐसी दृढ़ भावना रखना िी परम तत्त्व के साक्षात्कार का एक मागथ ि। अनासक्ति और त्याग-ये दो गीता के परम आदिे िैं।

भागवत में िमें सकारात्मक पक्ष का दिथन िोता ि। इस दृश्य िगत् का त्याग करो। नश्वर िगत् के सभी पदाथों के प्रहत मन का मोि दूर करो तथा परमात्मा के प्रहत परम प्रेम रखो। भागवत का समूपूणथ सन्देि 'प्रेम' िि में समाहित ि। यि प्रेम भगवत्प्रेम ि। यि िुद्ध प्रेम का प्रोज्ज्वल सार-तत्त्व ि, भगवान् के प्रहत रहत ि। गीता पूणथ अनासक्ति का उपदिे देती ि, पर भागवत भगविरण में पूणथ हृदय से अनुरि िोने को किता ि।

मिाभारत 'धमथ' के आदिथ पर अिल बने रिने को किता ि। उसका उपदिे ि हक िीवन का बहलदान दे कर भी धमथ के हसद्धान्तों ंसे हविहलत निीं ंिोना िाहिए। धमथ पर िी हिके रिो। धमथ से िी अन्तिःकरण तथा िीवन हनमथल बनते िैं, पहवत्र बनते िैं।

मानव-िीवन के सभी क्षेत्रों ंमें धमथ का आिरण कैसे िक् िोता ि, यि रामायण में बताया गया ि। रामायण का ग्रन्थ िमारे समक्ष एक आदिथ धाहमथक व्यक्ति के ठोस तथा व्याविाररक िीवन का उदािरण प्रस्तुत करता ि। यि एक आदिथ पहत, आदिथ पुत्र, आदिथ भ्राता, आदिथ सेवक, आदिथ हिज्ञासु तथा आदिथ रािा का प्रहतमान प्रस्तुत करता ि। मनुष्य-िीवन के हभन्न-हभन्न क्षेत्रों ंके आदिों का सिी दिथन रामायण के हदव्य पात्रों ंके िारा िमें कराया गया ि। यहद मनुष्य ईश्वर के प्रहत प्रेम हवकहसत करने के साथ-साथ धाहमथक िीवन यापन करना िािता ि, तो उसे अपने िीवन के हवहवध क्षेत्रों ंमें क्ा करना िाहिए, इसका प्रहतरूप रामायण में हदया गया ि। रामायण में वहणथत प्रसंगों ंसे हिक्षा ले कर मनुष्य परम धाहमथक िीवन यापन के अनुकूल अपने िीवन को ढाल सकता ि।

ब्रह्मसूत्र में इन सभी का मूलभूत कारण दिाथया गया ि। मनुष्य-िीवन का िरम लक्ष्य क्ा ि, उसे इसमें बतलाया गया ि। यि किता ि-"अहवनािी परम तत्त्व िाश्वत आनन्द की प्राक्तप्त िी िीवन का ध्येय ि और ये सभी पदाथथ इस ध्येय की प्राक्तप्त के हलए साधन िैं। इन सब साधनों ंसे परम धाम की प्राक्तप्त िोती ि, ििााँ पहुाँि कर दुिःख तथा मृत्यु से संकुल इस संसार में पुनिः निीं ंआना पड़ता।" ब्रह्मसूत्र का अक्तन्तम मन्तव्य यि ि हक धमथ, त्याग तथा भक्ति-मागथ से एक बार परब्रह्म की प्राक्तप्त कर लेने के पश्चात् 'न पुनरावतथते' अथाथत् िीव पुनिः वापस निीं ंआता। वि सदा-सवथदा के हलए असीम ितना, अहवनािी सत्ता, िाश्वत आनन्द तथा हिरन्तन िाक्तन्त में अवक्तथथत िो िाता ि।

यिी ध्येय ि। **'यद्गत्वा न डनवतवन्े तद्धाम परमं मम'** - ऐसा भगवान् गीता में किते िैं। इस परम धाम में पहुाँि कर मनुष्य पुनिः इस संसार में वापस निीं ंआता।

यिी परम पररपूणथता का स्वरूप ि। **'यो वै भूमा ततुसुखम्।'** यि भूमा िी इस िगत् में मनुष्य का ध्येय ि।

हिसके िान लेने पर अन्य कुछ िान लेने को िे निीं ंरिता- '**यक्तस्मन् ज्ञाते सववडमदं डवज्ञातं भवडत।"** **(**िानि कर हफर िानना रिता न कुछ भी िे िै।)

हिसको प्राप्त कर लेने पर अन्य कोई प्राप्तव्य निीं ंरिता- **'यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाडधकं ततः ।' (**प्राप्त कर हिसको हक कुछ पाना न रिता िे िै।)

हिसकी प्राक्तप्त तथा अनन्त उपभोग के हलए िम यिााँ हनरन्तर प्रयास कर रिे िैं, ऐसी अलौहकक क्तथथहत की महिमा का, उसके परम ऐश्वयथ का वणथन िै। इस भााँहत वे िमें ध्येय तथा आदिथ दोनों ंिी प्रदान करते िैं। आत्म-साक्षात्कार िमारा ध्येय िै। इनके साधन िैं गीता में वहणथत त्याग, भागवत में बतायी गयी भक्ति, मिाभारत का धमथ तथा रामायण का आदिथ िीवन।

मनुष्य–िीवन का लक्ष्य तथा उद्देश्य तथा उनकी प्राक्तप्त के साधनों ंका स्पि तथा गम्भीर रूप इन श्रेष्ठ धमथग्रन्थों ंमें से िानने को हमलता िै। यहद कोई साधक इन साधनों ंिारा ध्येय के प्राप्त्यथथ प्रयास करने में तत्पर िो, तो उसके हलए व्याविाररक सूिना भी प्राप्त िोती िै।

प्राथथना

परमा माता भगवती की नवरात्र के नौ हदन की आराधना के अन्त में आने वाले इस हवियादिमी के मिोत्सव में िम उनसे प्राथथना करें हक वि िमारे हृदय में बुक्तद्ध तथा सूमृहत-रूप में प्रकि िों।ं िम सब माता िी से प्राथथना करें हक वि सूमृहत-रूप में इन मिान् सत्यों ंको िमारे हृदय में सदा सिीव बनाये रखें हिन पर िमारा समूपूणथ िीवन आधाररत िो और हिसके आधार पर िमारे समस्त िीवन का गठन िो तथा इन मिान् सत्यों ंको मि
िीविन में िररताथथ करें; क्योंहक उनकी 'भ्राक्तन्त–िक्ति' तथा 'माया–िक्ति' इतनी रिस्यमयी िैं हक िम इन सत्यों ंसे सुपररहित िैं, िम उनके हव य में बारम्बार सुनते िैं और इससे िम उन्ें स्मरण रखने का प्रयास करें, तो भी न िाने कैसे एक पल में वि िमें हवसूमृत करा देती िैं और इस वै हयक िगत् की इन बाह्य वस्तुओं ंका िी बोध कराती िै। िमारी िेतना के ऊपर माता िी का यि आवरण पड़ते िी एक क्षण में िी इन मिान् सत्यों ंको िम भूल िाते िैं। िम क्षहणक आनन्द प्रदान करने वाले पदाथों में िी तन्मय बन िाते िैं और बाह्य िगत् के नाम-रूपों ंमें बंध िाते िैं। अतः िम बार-बार प्राथथना करें-"िे मााँ! हवद्या-स्वरूप में िमारे पास प्रकि िों।ं तुम्हारे हवद्या-स्वरूप से िमारी िेतना प्रकाहित िो।"
देवीसू का पाठ करते समय अभी िमने देखा हक माता िी िी सब-कुछ िैं। हनिा, क्षुधा, छाया, तृष्णा, भ्राक्तन्त इत्याहद माता िी के िी स्वरूप िैं। इसके साथ िी वि बुक्तद्ध, दया आहद भी िैं। अतः िमें करबद्ध तथा नतमस्तक िो कर प्राथथना करनी िाहिए- "िे मााँ! तुम अपने तेिोमय स्वरूप से मुझमें प्रकि िोओ और अपने अहवद्या माया-स्वरूप से मेरी रक्षा करो।" माता िी प्रसन्न िोंगी, वि तुि िोंगी और अपने तेिोमय नेत्रों ंसे िमें देखेंगी, िमारे सामने मन्द क्तस्मत करेंगी। तब िमारी समस्त भ्राक्तन्त, समूपूणथ दुःख, समग्र अन्धकार का अन्त िोगा और िम माता िी के सक्तिदानन्द परब्रह्म-स्वरूप का दिथन पायेंगे।

इन दस हदनों ंमें िमने माता िी के रूप के बाह्य छोर का िी स्पिथ करने का प्रयास हकया। माता िी के स्वरूप का अणु मात्र िी समझ सकें, इसके हलए िमने प्रयत्न हकया। िम अनन्त काल तक घण्टों ंतक बोलते रिें, तब भी माता िी के अगम्य स्वरूप का रंिमात्र भी ज्ञान निीं ंप्राप्त िो सकेगा। सभथ। धमथग्रन्थ तथा सभी सन्त अनन्त काल से माता िी का वणथन करते आ रिे िैं, हफर भी वि अभी तक अपूणथ िी िै। माता िी ने हिस पररधान

से अपने को आवृत कर रखा िै, उसके छोर मात्र का ज्ञान िमें इन अल् िोिों ंिारा हुआ िै, ऐसा मानना िमारी धृिता िी िोगी। िम तो केवल राई के दाने के बराबर िी उनका ज्ञान प्राप्त कर सके िैं।

माता िी के हव य में िो िानना िे रिा िै, वि मिासागर के हविाल ति की बालुका के समान िै। बाल-सुलभ प्रेम िी माता िी के पास बालकों ंको ले िाता िै और उन्ें िानने तथा उनका िाथ पकिने के प्रयास में समथथ बनाता िै। इन दस हदनों ंमें िमने िो माता िी के सम्बन्ध में िििाथ करने का प्रयास हकया िै, वि उनके िानने के हलए निीं ंहकया िै। यहद माता िी स्वयं कृपा कर अपने को प्रकि करें, तभी िम उन्ें िानने की आिा कर सकते िैं। यि तो मात्र उनके िरण कमलों ंमें पुष्प अपथण करने का एक नम्र प्रयास था

इन नौ हदनों ंमें माता िी की हवहवध प्रकार से पूिा की गयी। आराधना में भिन, कीतथन, नृत्य, अलंकार, पूिा इत्याहद थे तथा पूिा के अंग के रूप में माता िी िारा प्रदान की हुई वाणी से उनकी 'वाक्शक्ति' के स्वरूप का िमने पूिन हकया व िमने िोिों ंिारा उनकी आराधना करने का प्रयास हकया। इस हवियादिमी के पहवत्र हदवस पर माता िी के िरण कमलों ंमें ये अल् िोि अहपथत कर प्राथथना करते िैं- "िे माँ, यि अल् भी स्वीकार करो। तू प्रेम िै। तू करुणा िै। तू प्रकाि िै। तू मुक्ति िै। यि सब किने का क्ा तात्पयथ िै? इतना िी किना पयाथप्त िोगा हक िे माँ, तू माँ िै। अतः माँ-रूप में तुम्हारे िरणों ंमें अहपथत प्रेम की यि भेंि स्वीकार करो और िम पर अपनी कृपा की वृहि करो। िमारी ओर मुस्कानपूणथ दृहिपात कर अपनी अहवद्या माया का अन्धकार हवदूररत कर दो। िमारे गुरुदेव के हदव्य िरणों ंमें रिने वाले सभी साधकों ंको आत्मज्ञान-रूपी तेिोमय प्रकाि तथा सक्तिदानन्द का अक्षय सुख प्रदान करो।"

पररडिष्ट

श्री स्वामी हिदानन्द सरथ्वती (िीवन-झांकी)

पूिनीय गुरुदेव श्री स्वामी हिवानन्द के योग्य आध्याक्तत्मक उत्तराहधकारी श्री स्वामी हिदानन्द के हव य में किा गया ि-"यहद कोई कि काया के पीछे हछपे आत्मवीर को सौम्य िरे के पीछे हछपे हनयक्तन्त्रत हृदय को, कमथ की गहतिीलता के पीछे हछपी गिन मानहसक िाक्तन्त को तथा व्यक्तिगत स्तरीय प्ेरेम-पररियाथ के पीछे हछपी हनवैयक्तिक अनामक्ति का दिथन करना िािता ि, तो उसे स्वामी हिदानन्द से भेंकिरती िाहिए।"

स्वामी हिदानन्द ने दहक्षण भारत के एक समृद्ध पररवार में २४ हसतम्बर १९१६ को िन्म हलया था। प्रारम्भ से िी परम्पराओं ंऔर कमथकाण्डों ंमें उनकी रुहि थी। मिास (िेन्नै) क्तथथत लोयोला फालेि के वि एक प्रहतभािाली हवद्याथी थे। उन पर िसस क्राइस्ट के आदिों ंऔर उपदिों ंकी बहुत गिरी छाप प़िी। उन्ोंनें हिन्दू-संसूकृहत के तत्त्वों ंके साथ उनका समिय कर हलया। श्री रामकृष्ण तथा अपने गुरुदेव श्री स्वामी हिवानन्द से वि अत्यहधक प्रभाहवत रिे। व थ १९४३ में वि गुरुदेव की िरण में आ गये। तबसे उनके गुरुदेव का आश्रम उनका घर बन गया तथा द हिवाइन लाइफ सोसाविी के मिान आदिथ उनके सेवा-कायों की आधारहिला बन गये।

प्रारम्भ से िी स्वामी हिदानन्द में रोहगयों ंऔर दुिःखी व्यक्तियों ंकी सेवा करने का अतीव उत्सािा था। अपनी बाल्यावथथा में उन्ोंनें अपने घर के लॉन में कुहष्ठयों ंके हलए झोपहियाँ हनहमथत करवा दी थी और उन्ें देव-तुल्य मान कर वि उनकी पररियाथ हकया करते थे।

अपने आध्याक्तत्मक पुत्र तथा हप्रय हिष्य स्वामी हिदानन्द के हव य में स्वामी हिवानन्द ने किा था- "हिदानन्द िीवनुमुि, मिान् सन्त, आदिथ योगी तथा परा भि िैं। इसके अहतररि भी वि बहुत कुछ िैं। अपने हपछले िन्म में वि एक मिान् योगी तथा सन्त थे। उनके प्रविन उनके पहवत्र हृदय के भावोद्गार तथा उनकी प्राहतभज्ञानात्मक प्रज्ञा के प्रकिीकरण िैं। वि एक व्याविाररक वेदान्ती िैं। उनके िों ंमें अद्भुत प्रभावक िक्ति िै। एक मिान् हमिन को पूरा करने के हलए उन्ोंनें िन्म हलया िै।"

एक उतृकि संन्यासी के रूप में आध्याक्तत्मक िुम्बकव के गुण के धनी स्वामी िी अनहगनत व्यक्तियों ंके हप्रयपात्र बन गये तथा संसार-भर में हदव्य िीवन के मिान् आदिों ंके पुनरुिीवन के हलए सभी हदिाओं ंमें कहठन पररश्रम करते-करते अन्ततिः २८ अगस्त २००८ को ब्रह्मलीन िो गये।